CC0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

आस्था के गीत अनास्था के बीच

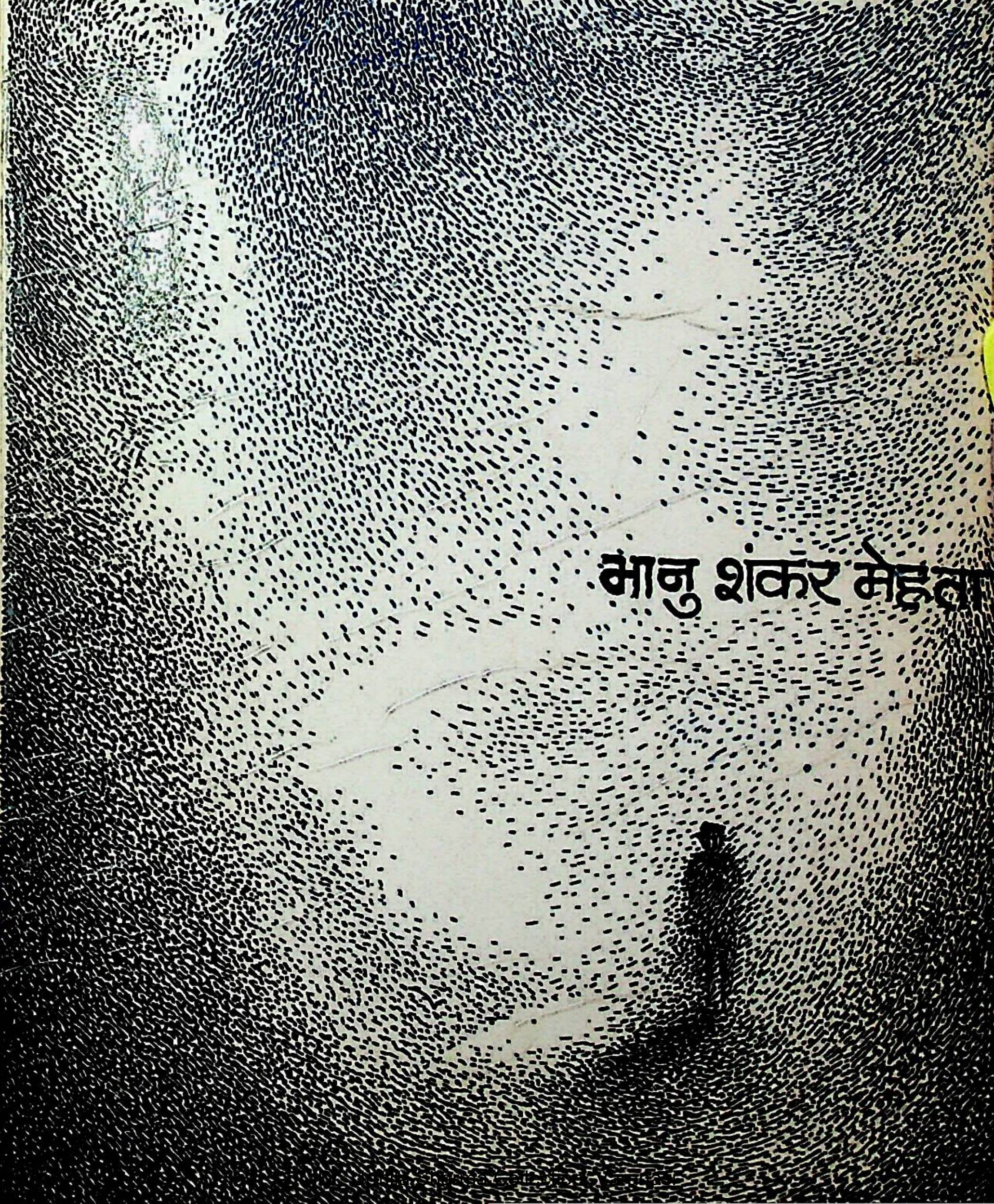

भानु शंकर मेहता

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

आस्था के गीत :
अनास्था के बीच

(वृत्त-गंधी रचनाएं)

आदरणीय
डॉ. प्रेमलताजी को
सादर
भानुशंकर मेहता
२८.९.८६

भानुशंकर मेहता

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

© डा० भानुशंकर मेहता
बी० ३७/९७ विरदोपुर, वाराणसी

सहयोग :
बाबू जगमोहन दास साह चैरिटेबुल ट्रस्ट, सिगरा, वाराणसी

प्रथम संस्करण : 1988

वितरक :
विश्वविद्यालय प्रकाशन, चौक, वाराणसी २२१००१

मूल्य : रु० 40.00

आवरण एवम् शीर्षक चित्र:
वेद प्रकाश मिश्र

मुद्रक :
तारा प्रिंटिंग वर्क्स, वाराणसी

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

बड़े भाई

श्री राजकुमार साह

को

सादर

समर्पित

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

आशीर्वचन

मुझे सुखद आश्चर्य हुआ, जब मुझसे बंधुवर श्री भानुशंकर मेहता ने कहा कि मेरे कई कविता संग्रह तैयार पड़े हैं पहला अब छप रहा है, 'आस्था के गीत-अनास्था के बीच', इस पर भूमिका लिख दें। भानुशंकर जी विदग्ध रसिक हैं, सच्चे अर्थ में बनारसी हैं, कला-प्रयोक्ता और कला-पारखी हैं, काशी की प्रत्येक स्नायु और प्रत्येक प्राण-स्पन्दन से परिचित हैं, इतना बहुज्ञ व्यक्ति कवि भी होगा, इसका मुझे कुछ भी अनुमान नहीं था। परन्तु मैंने इस संग्रह की कवितायें पढ़ी, इन कविताओं पर अपने दादागुरू स्व०महामहोपाध्याय पं० गोपीनाथ कविराज, अपने गुरुवर्य स्व० पं० क्षेत्रेश चन्द्र चट्टोपाध्याय और अपने गहन विचारक बन्धु श्री जडाव लाल मेहता की अनुपूरक टिप्पणियाँ (ये स्वतन्त्र लेख ही है वस्तुतः) पढ़ी तो मुझे बड़ा परितोष हुआ और आत्मगौरव भी कि इस प्रकार के नये उन्मेष का परिचय देने का सुअवसर मुझे मिला है।

भानु जी ने ये कवितायें बीसेक वर्ष पूर्व लिखी थीं, ऐसे विषय पर लिखीं, जिसपर आधुनिक हिन्दी में किसी ने कुछ लिखा नहीं, उस समय थोड़े से निबन्ध स्व० कविराज जी के प्रकाशित थे, परन्तु श्री चक्र-साधन और श्री चक्र में पिण्ड-ब्रह्माण्ड के समस्त व्यापारों का दर्शन जैसे विषयों को केन्द्र में रख कर काव्य रचना नहीं हुई थी। इधर जरूर तांत्रिक कला और तान्त्रिक-प्रतीकों वाली कविता का कुछ फैशन सा चला है पर है वह फैशन ही, भीतर की प्रेरणा से रचना तन्त्र की मूल भावना को पकड़ कर नहीं के बराबर ही है। इस दृष्टि से श्री भानुशंकर मेहता अपने समय से आगे हैं। उन्होंने प्रतीकों के साथ खिलवाड़ मात्र नहीं किया है, सृष्टि की नित्य नयी होती हुई सुन्दरता को अपने भीतर भर कर लिखा है। भानु जी अपने जमाने की तर्क-जड़ता की अनदेखी नहीं करते, न उसे नकारते हैं, पर उसकी सीमा है, उस सीमा के आगे भी मानवी राह है, मानवीय उदात्त भावनाओं की गति है, यह बात वे सौ जोखिम उठा कर भी रेखांकित करना चाहते हैं। उन्होंने पोथी-ज्ञान को आज के पर्याकुल जीवन का सन्दर्भ दिया है और तम की वास्तविकता के झरोखे से प्रकाश का आवाहन किया है।

वे अपनी रचना को कविता नहीं कहना चाहते, वृत्तगन्धी गद्य कहते हैं, पर उनकी रचना विचार-कविता ही तो है, संघटना, अन्विति, लय-योजना सभी दृष्टियों से इसे कविता कहना ही अधिक उपयुक्त होगा। विचार-कविता

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

में रस न होता हो, ऐसी बात नहीं, उस रस के ग्रहण के लिए सामान्य बुद्धि या समझदारी के अतिरिक्त विशेष बुद्धि की अपेक्षा है, जो वस्तु मात्र नहीं देखती वस्तुओं की परस्पर-सम्बद्धता और सापेक्षता भी देखती है और देखते पमय वस्तु के साथ तादात्मय स्थापित कर सकती है।

इसका यह अर्थ कदापि नहीं कि इस विशेष बुद्धि की भूमिका के कारण सम्प्रेषण बहुत कठिन हो जाता है। सम्प्रेषण तो विचार-कविता का और समर्थ होवा है, क्योंकि उसकी प्रक्रिया मनुष्य को उसके दायरे-दर दायरों से तत्काल मुक्त करती जाती है।

भानु शंकर जी की कवितायें स्तरीय विचार-कवितायें हैं। मैं अपने को इस रचना के विवेचन के योग्य नहीं पाता, क्योंकि तन्त्र-साधना का मेरा ज्ञान नगण्य है और तन्त्रवाङ्मय की समझ भी बहुत अल्प। संस्कृत साहित्य का विद्यार्थी होने के कारण सौंदर्य-लहरी, ललिता सहस्त्रनाम जैसे ग्रन्थों का पारायण अवश्य किया है और इन वर्णित सौदर्य की सुवास जरुर कभी-कभी सुरभित कर गयी है। इस बल पर इतना ही कह सकता हूँ कि भानु जी का कविता संग्रह **आस्था के गीत—अनास्था के बीच** हिन्दी रचना संग्रह में नये आलोक-पिण्ड का विस्फोट होगा, उससे नयी रचनात्मक ऊर्जा अवश्य विकीर्ण होगी।

मुझे यह जानकर और भी प्रसन्नता हुई कि उपलिखित विद्वज्जनों की टिप्पणियाँ भी इस संग्रह के परिशिष्ट में दी जा रही हैं, मानो वे अपने आपमे सनद हैं कि इनकी रचना पर कितनी गहन प्रतिक्रिया उद्‌बुद्ध हुई स्व० कवि राज जी, स्व० गुरु जी और लब्ध प्रतिष्ठ विचारक जडाव लाल जी जैसे मनीषियों के मन में और उन्होंने अनुपूरक रूप में सृष्टि के सत्य का सौन्दर्य अपने अपने ढ़ंग से उन्मीलित किया।

मैं भानु शंकर जी को इस संग्रह के लिए हार्दिक बधाई देता हूँ और आशा करता हूँ कि उनका उत्तर चरित और काव्यमय हो।

विद्या निवास मिश्र
कुलपति काशी विद्यापीठ
आषाढ़ कृष्ण ७।२०४५

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

अपनी बात

"अस्था के गीत.................." गीत नहीं है, वृत्त-गंधी रचनाएं हैं। सन् 1965 में गुरुवर वेढब्जी के निदेश पर मन में घुमड़ती बातों को लिखना शुरू किया और फिर अगले बीस वर्षों तक यह धारा प्रवाहित होती रही। कुछेक रचनाएं काव्य संग्रहों में शामिल भी की गयीं (काशी के कवि और उनका काव्य, कल आज अभी), कुछेक पत्र पत्रिकाओं में भी छपीं। इन वर्षों में इन रचनाओं के पाँच संग्रह तैयार हो गये पर इन अरण्य-रचनाओं को छापने को कोई भी तैंयार नहीं था। कहते हैं बारह वर्ष बाद घूरे का भाग्य भी फिरता है, पच्चीस वर्ष बाद भाई चंद्रकुमार जी का ध्यान इधर आकर्षित हुआ और प्रिय अनुज सहृदय कवि स्व० विजय कुमार साह की स्मृति में प्रतिवर्ष प्रकाशित की जाने वाली काव्य रचना में इस वर्ष इसका चयन किया गया।

इन रचनाओं का कुछेक संत मनीषियों ने श्रवण किया और आशीर्वाद दिया जिसमें स्व० बाबा गोपीनाथ कविराज जी (श्रीमता का मंदिर), स्व० डा० क्षेत्रेश चंद्र चट्टोपाध्याय (भवसागर) तथा प्रसिद्ध दार्शनिक डा० जडावलाल मेहता (प्याज रूप सत्य) के आशीर्वाद लेख परिशिष्ट में संकलित हैं।

इस प्रकाशन के लिये मैं बाबू जगमोहन दास चैरिटेबुल ट्रस्ट के न्यासियों का, तारा प्रिंटिंग प्रेस का, चित्रकार श्री वेद प्रकाश मिश्र का आभारी हूँ। डा० विद्यानिवास मिश्र ने आशीर्वचन लिखने की कृपा की इसके लिये उनका कृतज्ञ हूँ। श्री राजकुमार साह जी ने जीवन में छोटा भाई मानकर अनेक अवसरों पर पथनिदेश दिये हैं। श्री चंद्रकुमार साहजी का मेरे प्रति विशेष अनुग्रह रहा है। साह बंधुओं को अपना मानकर आभार मानने को धृष्टता नहीं करूँगा।

बाकी रचनाएं—अच्छी बुरी जैसी है—आपके समक्ष हैं। कच्चे रूई सी आप इनकी धुनाई कर सकते हैं।

भानुशंकर मेहता

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

मुझे तुझे जानना ही होगा
हे अज्ञात !
मेरी आत्मा की गहराइयाँ नापने वाले
मेरे जीवन को झंझावात से झकझोरने वाले
अचिंत्य और फिर भी बंधु जैसे
मुझे तुझे जानना ही होगा !
अरे भजना भी पड़ेगा ।

—नीत्शे

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

अनुक्रमणिका

आस्था के गीत	१
अनास्था के बीच : अपनी बात	३
नहीं-नहीं-नहीं	६
भवसागर तट पर खड़े एक यात्री की उहापोह	१६
जीवेम शरदः शतम् ✓	२६
मामेकम् शरणम् व्रज ✓	३५
तमसो मा ज्योतिर्गमय	४१
सम्भवामि युगे-युगे	४३
उभयोर्मध्ये	४५
काँच का घर	४८
सम्पूर्णानन्द	५५
तत्त्वमसि	६५
श्री मंदिर ✓	६७
पार्वती परिणय	७७
अनोखी शादी	८६
सितार	९०
प्राण का मन्दिर	९२
विश्व के एक चौराहे से	९५
प्राण की यात्रा	९८
आकाश मेरा और तुम्हारा	९९
मयखाना	१०४
शैतान	१०५
प्याज रूप सत्य	१११
देहरी	११४
देहरी और द्वार	११५
प्रश्न	११९
उत्तर	१२१
हम - तुम	१२२
तूँ तूँ - मैं मैं	१२३
समझानेवाले	१२४
किस पथ से चलूं	१२५

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

वो कैसा होगा	१२६
कैसे आऊँ	१२७
उजाले की तलाश	१२८
मजबूरी	१२९
विवशता	१३१
शोध	१३२
उसकी खोज में	१३५
वह	१३७
मंजिल	१३८
मुक्ति	१४०
मोक्ष	१४१
प्रमाण	१४४
'मैं' का घेरा	१४६
अब मैं क्या करूँ	१४७
काशी के राजा से	१४९
अन्धेरा	१५२
अनुपम	१५४
शरणागति	१५६
क्या तुम आये थे	१५९
प्रार्थना	१६४
स्वप्न मिलन	१६५
अनुरोध	१६६
कोटिकण्ठ से प्रार्थना	१६८
मूरत अमूरत	१६९
नाम जप	१७१
राम से	१७३
रचना का सिरदर्द	१७४
उपहास	१७६
परिशिष्ट	
१. श्रीमाता का मंदिर—(स्व०) म०म० डा० गोपीनाथ कविराज	१७८
२. सृष्टि का रहस्य—(स्व०) डा० क्षेत्रेक्षचन्द्र चट्टोपाध्याय	१९५
३. प्याज रूप सत्य—डा० जडावलाल मेहता	२०५

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

आस्था के गीत

ये
निर्जन में खिले फूल हैं
रंग भी है
रूप भी है
किंतु
किसी माला में गूँथे नहीं गये
किसी प्रतिमा पर चढ़े नहीं हैं,
अनदेखे विकसित हुए—
खिले, सुरभित हुए
और कल मुरझा जायंगे
या
किसी वन पशु के पैरों तले
रौंदे जायेंगे,
ये

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

अनास्था के बीच—
आस्था के गीत
जंगल में मोर से नाचते,
स्वान्तः सुखाय
तालियों के तलबगार नहीं हैं,
किसी के गले का हार नहीं हैं,
ये
अनास्था के बीच
आस्था के गीत हैं।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

अनास्था के बीच अपनी बात

ये गीत मेरे नहीं हैं
कभी जब मनाकाश में
सघन घन घिरे
अंधेरी गलियों में
पथ सुझाती
कुछ बिजलियाँ
कौंधी
गिरीं
और
धरती को दाग कर
तप्त शलाखा से
कुछ शब्द लिख गयीं
अगर ये गीत हैं
तो

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

ये गीत मेरे नहीं हैं।
जैसे
रेडियो से ध्वनित कोई कविता
या नहर में लहरती सरिता
कहीं और से प्रवाहित होती है,
कहीं और से प्रसारित होती है,
मेघ किसी और का सन्देश बरसाते हैं,
घाटियों में गूँजते स्वर कहीं और से आते हैं,
फोनोग्राफ से निकलते गीत
उस रेकर्ड के हैं
जो कहीं और भरा गया
न जाने किसके स्वरों में, पता नहीं
क्योंकि—
गर्दिशेदौरां में
लेबुल मिट गया है,
नाम खो गया है
किन्तु
मैं चुरायी चीजें नहीं बेचता
मैं परायी चीजें नहीं बेचता
अनास्था के बाजार में
किसी पर्दानशीं के इशारे पर
मैं आस्था के ये शाश्वत स्वर
आज के माहौल में, ये बेसुरे रेकर्ड लाया हूँ
कोई खरीदे न खरीदे
किन्तु दूकान पर बैठा देखकर मुझे
भ्रम न हो किसी को
इसी से साफ कहता हूँ
ये गीत मेरे नहीं हैं!

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

मैं तो सिर्फ कलश हूँ
जिसे किसी ने उठाया
किसी ने काव्य कूप पर धरा
किसी ने प्राण अम्बु से भरा
फिर उठाकर
धरा के आँगन में धरा
मैं तो सिर्फ कलश हूँ, जलभरा
प्यासों के नगर में
सिर्फ ढुलका देता हूँ प्राण-वारि
प्यास किसी की
बुझे, न बुझे
क्योंकि
मुझमें भरे ये जल मेरे नहीं हैं
इसी से साफ कहता हूँ
ये गीत मेरे नहीं हैं !

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

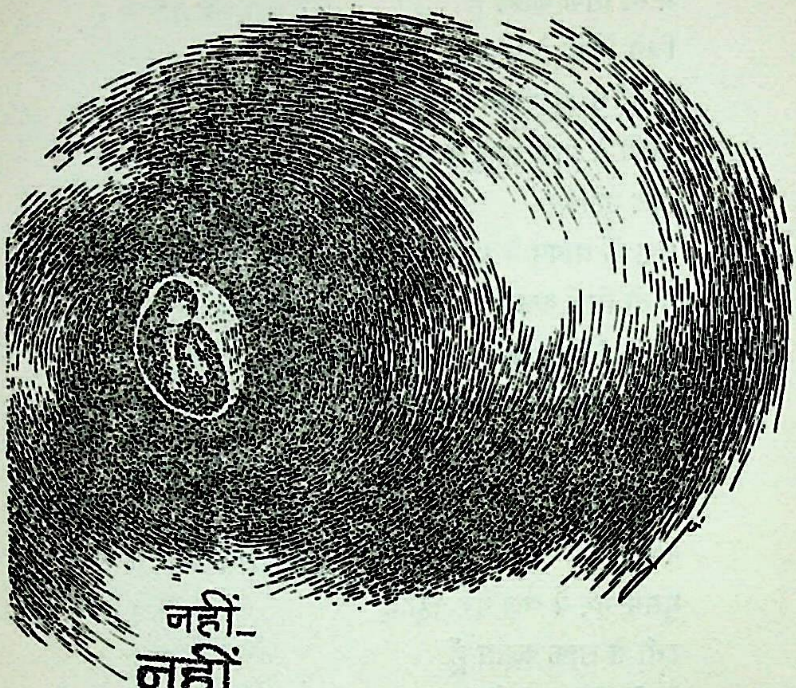

नहीं_
नहीं_
नहीं_

करारविन्देन पदारविन्दम्
मुखारविन्दे विनिवेशयन्तम् ।
वटस्यपत्रस्य पुटेशयानम्
बालमुकुन्दम् शिरसा नमामि ॥

प्रलय पयोधि में
पत्ते पर
पड़े पड़े
"बोर" हो रहे थे ।
ऊपर आकाश नहीं था
कि तारे गिनते
नीचे पाताल नहीं था

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

कि थाहें लेते
आदि अन्त मध्य नहीं था
"दूर"
"पास" नहीं था
"स्थान" नहीं था
"अवकाश" नहीं था
'आयाम" नहीं था
"समय" नहीं था
सांझ-प्रभात नहीं थे
'कल' 'आज' नहीं थे
प्रकाश नहीं था
तम का भी भास नहीं था
सूर्य चन्द्र–
ग्रह नक्षत्र
अगणित तारागण
जड़ चेतन
प्रवुद्ध अचेतन
देव दनुज
मानव दानव
पंचतत्व से निर्मित
मायामय यह मेला
त्रिगुणात्मक यह संसार नहीं था,
"पाप" नहीं था
"पुण्य" नहीं था
"सत्य" नहीं था
"झूठ" नहीं था
"हाँ" नहीं था
"नहीं" नहीं था

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

कुछ भी तो नहीं था
वो खुद भी था
या
नहीं था ?
'नेति-नेति'
'अस्ति नास्ति'
केवल झगड़े–
वाद विवाद
सूत न कपास
किसने देखा है
कौन बतलायेगा
'नेति' का वह महिमा रूप ?

* * *

खिलौने के खिलौने के खिलौने

फिर भी
मान लें
प्रलय पयोधि में
पत्ते पर
पड़े पड़े
बोर हो रहे थे
बाल मुकुन्द !
बाल अनोखा
आँखें खोली
क्रीड़ा कौतुक
खेल खेलने की इच्छा जागी
रच डाले
पिण्ड ब्रह्माण्ड अनेक

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

गोलियाँ रंग बिरंगी
लट्टू अलबेले
फिर पिण्डों पर नये खिलौने
गुड्डे गुड़ियाँ
जलचर थलचर
नभचर नाना
सचराचर सृष्टि
आँख मिचौनी
दिवस रात की
आँधी पानी
ऋतुओं के मेले
रंग बिरंगे
खेल पतंगों के
पाँच हाथ के बड़े परेते—
लख चौरासी चक्कर देते
पर्वत का पाला खींच खींच कर
घन बादल की
जमी 'कबड्डी'
'आइस-पाइस' चपला की
'धूप-छाँव' की
'लुको-चोरी' !

* * *

सतयुग त्रेता
द्वापर कलियुग
अनुवर्त्तन
परिवर्त्तन
संवर्त्तन
बाजी एक बिछी

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

चौपड़ पासे
बहुत गिरे
जन्म मरण
शैशव यौवन
आड़ी तिरछी चालें
हाथी घोड़े
प्यादे फरजी
ढाई टाँग पर
चली 'जरा' बिचारी
ठिठकी यौवन की प्यादी
चक्र-व्यूह
दाँव-पेंच
काले धौले खाने
मोहरे
असली-नकली
'चतुरंग' जमी
एक खिलाड़ी
खेल अनेक
खुद ही खेले
खुद ही हारे
खुद ही जीते
मन मोहन
मन रंजन
नित नूतन

* * *

फिर
घोटाला

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

गड़बड़ झाला
खेल खेल में
इक पुतला रच डाला
ब्रह्म की 'मिट्टी'
प्रलय का 'पानी'
श्वास 'समीर'
अन्तर 'ज्वाला'
मन का 'आकाश'
गूँध कर
पुतला रच डाला
अपना ही रूप
अनूप दिया
अपने ही प्राणों से
चुटकी ले
जीवन डाला
लो—उसने पुतला रच डाला !
पुतले को ज्ञान दिया
पुतले को हाथ दिये
पुतला प्रभु का प्यारा
पुतले के करतब अनोखे
पुतले के नर्तन न्यारे
पुतला बड़ा नकलची
पुतला अच्छा अभिनेता
पुतला प्रभु का प्यारा
पुतला बड़ा दुलारा
लाड़ प्यार कर
माथे बैठाला
खूब बिगाड़ा

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

ठिकरा कर डाला।
पुतले में "मैं" "तूँ" जागा
माया मोह में फँसा अभागा
अहंकार की सीढ़ी चढ़कर
उसने प्रभु को ललकारा
लो—पुतला बन गया करतार
विष्णु का अवतार
पुतला ?
सिरजनहार ??
पुतले ने रचे खिलौने
खिलौने ने खिलौने पर रचे खिलौने
भुनगे ने हाथी को ललकारा
पुतले के सब खेल नये
पुतले के सब नये खिलौने
तोड़-फोड़
मार-पीट
लूट-पाट का बाजार गरम
प्रभु बनायें
पूत बिगाड़ें
प्रभु सजायें
पूत उजाड़ें
प्रभु के खेलों में
दस्तन्दाजी
प्रभु बिछायें
उलटे वह बाजी
फिर एक दिन
पुतले ने आफत कर डाली

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

वर्जित मञ्जूषा पर दृष्टि डाली
परमाणु की पेटी खोली
अपनी औकात भूल कर
शक्ति निकाली !
शक्ति निकाली !!
शक्ति निकाली !!!
पुतला पगलाया
मद में डूबा
चिल्लाया—
'हटो जो बूढ़े बालक
हटो ओ नालायक संचालक
अब सृष्टि का शासन
मुझ बलशाली को करने दो
तुम पुरुष पुरातन
जाओ
कहीं लेट कर विश्राम करो'

* * *

प्रभु का
भृकुटि भंग हुआ,
ऐसा दुस्साहस ?
रुष्ट हुए,
ऊबे खेल खिलौनों से
घर ताश का
एक फूंक में,
बिगड़ गया, उजड़ गया
बाल मुकुन्द का
भृकुटि भंग हुआ ?

* * *

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

तपे सूर्य द्वादश
प्रलय के मेघ उठे
पवन उच्छ्वास चले
बरसे सात सागरों के जल
भ्रमित दसो दिशाएँ
कम्पित चौदह लोक
उड़ गये छन में
सप्त आवरण
जल-जल-जल !!!
जल में जागा
बड़वानल
चौसठ योगिनी
नव दुर्गा
रुद्र एकादश
नाचे
उन्मत्त काल-व्याल,
बाजे
ताण्डव के ताल,
मरणशील
मरण स्वयं
मृत्युंजय यमराज भी
महाकाल का भोग बना
और कल्पान्त आ गया !

* * *

क्षण भंगुर छौने
माटी के मरे खिलौने
कहाँ बह गये ?

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

कहाँ रह गये ?
झंझा 'अस्ति' की
डूब गयी
'नास्ति' के सागर में !
सिमिट गया सब खेल
प्रलयंकर में
अभयंकर में
फिर तो
जल था
वितल सजल था
और
पत्ता
किसी वट का
प्रलय पयोधि में
सोये
खोये
गोपाल को
लिए
बहता रहा
बहता रहा
बहता रहा !

•

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

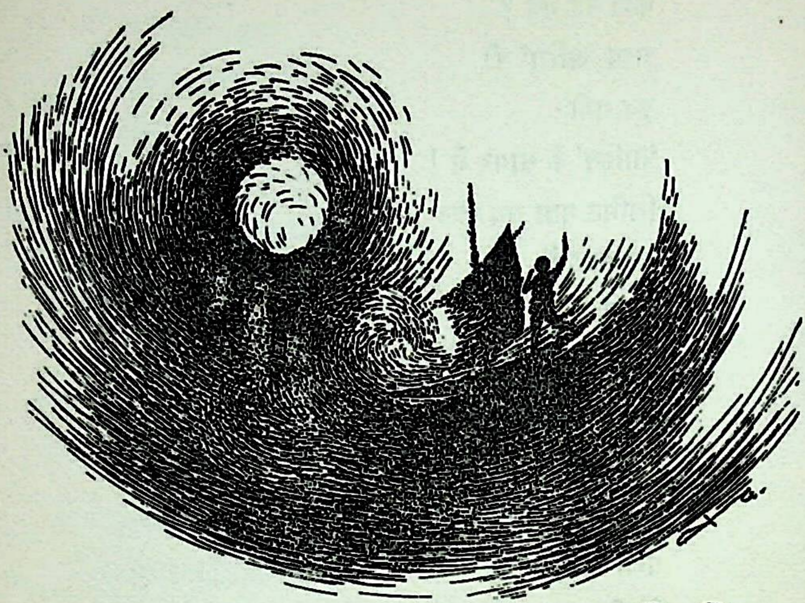

भवसागर के तटपर खड़े एक यात्री की

ऊहापोह

इस सागर के
पार जाना होगा ?
क्यों ?
किस लिये ?
वहाँ—
'उस पार' क्या है ?
और 'इस पार'
क्यों भेजे गये ?
क्यों यह आने-जाने का नाटक ?
क्यों यह पगलों-सी चलफेरी ?
हाँ—प्रश्न बहुत हैं

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

पर समाधान एक नहीं—
चलता है बस
अन्धा आदेश एक
"आया है सो जाएगा
राजा रंक फकीर।"
क्यों आया ?
क्यों जाएगा ?
इससे क्या मतलब
यह तो एक तमाशा है
नाटक है, केवल नाटक
व्यर्थ करो मत, तर्क-वर्क
ओ, छिद्रान्वेषी
अपनी नियत भूमिका निभाओ
नाव आ गयी है
चुपके से बैठ जाओ।

* * *

देखो तट पर
नौकाओं का मेला
सबकी अपनी धरम-ध्वजाएँ
सब अपने वादों के पाल उड़ायें
हर बेड़े की शान अलग
हर बेड़े के कप्तान अलग
सब अपने-अपने कम्पास लिये
अलग-थलग राहों पर चलते
सागर की लहरों पर
बड़े परिश्रम से
नये-नये पथ हैं गढ़ते

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

पानी पर सड़क बना कर
आपस में रगड़ा-झगड़ा करते

*   *   *

लो,
बीच उदधि में आये
आपस में टकराये
मचा झमेला
बहरों में वाद-विवाद
अन्धों ने पथ निर्देश दिये
कुछ घबरा कर पूछ रहे
"पार कहाँ है ?"
"पार कहाँ है ?"
"अलख पड़ा जो
लखो वह पार कहाँ है ?"
मंजिल एक सभी की
पर अलग दिशाएँ,
कैसी मनमानी
खींचा-तानी
'पार इधर है
पार इधर है
मेरे साथ चलो
मेरा पथ सत्वर है'
'नहीं नहीं, यह भरमाता
यह पथभ्रष्ट
इसका मत साथ करो
पार उधर है
उधर चलो
उधर चलो'

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

फिर
झगड़े झंझट
मार-पीट, प्राणघात
भ्रांति जाल
तिस पर निर्जल जलधि
विपरीत-रीति
यहाँ—
नौकाएँ डूब कर भी
डूबती नहीं—
नाविक मर-मर कर भी जीते
पल भर को ओझल हो जाते
फिर-फिर आते
नित नयी नौकाएँ
आतीं जातीं
कलह विवाद
चलते रहते।

* * *

और देखो
झगड़े भी
कैसे कैसे
सिर पैर बिना के
'जानते हो उस पार क्या होगा ?
उस पार 'स्वर्ग' है
उस पार है नन्दन-कानन,
मनचाही चीजें देनेवाला
कल्पवृक्ष जिसमें—'
डपटता दूसरा
'बकता है यह

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

उस पार तो—
जन्नत है
बहिश्त है
हूरें हैं
बरसती हैं खुदा की नेमतें
है बस मजे ही मजे—'
हँस कर बोलता तीसरा –
'तुम सब जाहिल हो
बैठकर खाते रहते
पुलाव खयाली
पार—
आह ! तुम क्या जानो
पार क्या है ?
पार–धवल शान्ति है
पार–मुक्ति का मन्दिर है
पार–पिया मिलन की आशा है
समझे—'
चौथा चिल्लाता—
'बकवास-बकवास
खाली बकवास
मिथ्या शब्दाडम्बर
उस पार नहीं कुछ भी
केवल एक छलावा
षड्यन्त्र है—
इस पार भीड़ कम करने का—
किसी लक्ष्मीपति का उपक्रम है !
ये पण्डित मुल्लों के बहकावे,
उसके एजेण्ट मुझे नहीं भरमाते

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

अरे, वापस ले चलो
मुझे वापस ले चलो
इस पार ही छोड़ दो
मुझको मेरी हालत पर !'
विद्वान एक उसे समझाता
'मित्र—
आस्था खोकर बलहीन हुए हो,
क्षीण हुए हो,
सुनो—
आवागमन का यह
चक्कर निर्मम
पार हो न हो
पर वापस कोई नहीं आता
बस आगे बढ़ता जाता
आगे—
आगे—
और आगे !
आगे जहाँ
विस्मृत का गर्त है
जहाँ सब कुछ खो जाता
वहीं तक सबका नाता—'
सनकी सत्य बताता
"क्या 'पार'-'पार' चिल्लाते हो
क्यों व्यर्थ रोते गाते हो
अरे खाओ-पीओ
और मौज करो—
आज तो ऐश करो
कल किसने देखा है ?,

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

पार है या नहीं
यह जानकर भी क्या होगा ?"
सभी बजाते
अपनी डफली
गाते
अपना राग ।

* * *

सुना
यह सागर बहुत छोटा है
पर
बेड़ा पार बहुत विलम्ब से होता है
क्योंकि
बीच में जो ठहरा
'मध्य' में जो डूबा
उसे फिर लौट कर
इस पार आना होता है
जबतक नैया पार न हो
यह चक्कर दोहराना होता है ।

* * *

फिर
सागर यह जो
ऊपर से
शान्त सुस्थिर-सा लगता है
भीतर से
उतना ही विकल अशान्त
खतरों से भरपूर
इसके दर्पणतल के नीचे
नाचते भीषण भँवर जाल

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

खाने को बैठे काल व्याल
मगर बड़े विकराल
कहते हैं
बड़े भाग हों तब
कोई नैया इनसे बच पाती है
बाकी तो
हर डूबी नैया को
'समय' लहर फिर लौटाती है,
फिर नयी मुसाफिरों को उकसाती है !
चक्कर में चक्कर चलते हैं
दिग्पालों को बेड़ी डालकर
लगता है जैसे
काल कारवां आगे बढ़ते हैं
और बहलाती रहती
पार खड़ी
क्षितिज संरचित
मरीचिका ।

* * *

सुनी
मैंने अनुभव की बातें
तर्क ज्ञान विज्ञान के
सलाहें स्नेह भरीं
मिले उपदेश जो रक्षा कवच बनेंगे
मिले
जन्तर-मन्तर
गण्डे-ताबीज
आशीर्वाद गुरुजनों के
और

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

शुभकामनाएँ
सन्तों की !
बतलायीं सबने
तरकीबें
जो पथ का सम्बल बन जायंगी
योग-ध्यान
गीत-संगीत
भजन-कीर्तन
नाम-यशगाथा
नैया उड़कर पार लगेगी
जब बाजैगा
अनहद बाजा !
हाँ—
यह सब मेरा है
मार्ग भी सब अच्छे हैं
अच्छा मिला बसेरा है !
आपने दिये हैं
भक्ति के पतवार
जो सहज पार ले जाते हैं,
'हठ' के पाल
जो पार उड़ा लाते हैं
'तुरीय' के पनडुब्बे
जो छन में पार लगाते हैं
धन्यवाद,
धन्यवाद !
पर
मुझे अभी इसी पार अच्छा लगता है
हाँ

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

उस पार की छलना भी खींच बुलाती है
'जाऊँ कि न जाऊँ ?'
यह प्रश्न शाश्वत
अभी तक
हल नहीं कर पाया हूँ
यद्यपि मेरी मर्जी से
यह नाव नहीं चलने की
फिर भी—
जल्दी न हो अगर
इजाजत दें अगर
तो
थोड़ी देर
इस पार ही बैठ जाऊँ
और
विचार कर लूँ
कि अगर जाना न चाहूँ
तो
'तुम्हारे कानून का उल्लंघन कैसे हो सकेगा ?
कैसे हो सकेगी
सविनय अवज्ञा ?'
बाकी
उस पार का,
विषम इस भवसागर का,
विपद भरी यात्रा का,
भय मुझे नहीं है
हाँ
कुछ प्यार
इस पार से
जरूर हो चला है !*

●

* देखिये परिशिष्ट में डा० क्षेत्रेशचन्द्र चट्टोपाध्याय का आशीर्वाद लेख ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

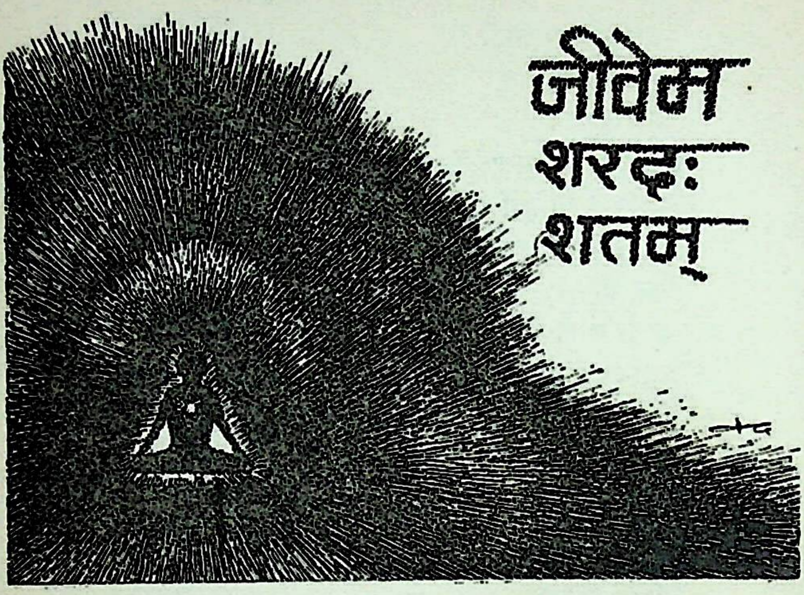

जीवेम शरदः शतम्

कई जन्म ले चुका हूँ
कई बार जी चुका हूँ, मर चुका हूँ
सौ वर्ष जीने के आदर्श नुस्खे की खोज में
अवतार कितने ही धर चुका हूँ, कई बार······
सत्युग में हुई
ऋषियों की एक सभा
विषय विचार का था
"आदमी कितना जिये ?
कब तक जिये, कैसे जिये ?"
(माना मरना-जीना कुछ अपनी मर्जी की बात नहीं
फिर भी
एक लक्ष्य का होना अच्छा है)
गम्भीर विचार-विमर्श
कितने ही शोध-शास्त्रार्थ

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

ज्ञान-ध्यान, अन्तर-दर्शन
द्रविण प्राणयाम
'संवोमनांसिजानताम्'
फिर हुआ
'समानोमन्त्रः समितिः समानी
समानम् मनः सह चित्तेषाम्'
और तब
एक मन्त्र प्रचारित हुआ
माँगा ब्रह्म-सूर्य से
'पश्येम शरदः शतम्
जीवेम शरदः शतम्
शृणुयाम शरदः शतम्
प्रब्रवाम शरदः शतम्
अदीनः स्याम शरदः शतम्
भूयश्च शरदः शतात्'
माँगा, शुभ माँगा
मन, प्राण, इन्द्रिय से सचेत
शत शरदों का जीवन माँगा !
लक्ष्य स्थिर हुआ—
पर पता न पथ का चला
और सौ शरद जीने के आदर्श पथ की शोध में
बन्दा तब से ही है लगा
ढूंढने के बहाने
कई जन्म ले चुका हूँ
कई बार जी चुका हूँ, मर चुका हूँ !

* * *

नानाविधि योग प्रयोग

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

भोजन-भोग
आवास-निवास
रहन-सहन, रीति-रिवाज
यम नियम संयम्
गति-प्रगति, श्वास-निःश्वास
सबके कर देखे हैं हिसाब
चलने रुकने के अनुभव
विविध प्रकार, कई बार कर चुका हूँ
कई जन्म ले चुका हूँ,
कई वार जी चुका हूँ, मर चुका हूँ !

* * *

मिला हूँ
सभी युगों में शत-जीवियों से
सुने हैं धैर्य से
अनुभव उनके
जो विपरीत रहे हैं सदा एक दूसरे के !
राय सलाहें
अनमोल बड़ी जो
उनका पथानुसरण किया
कहा वैसा आचरण किया
किन्तु हर बात बेमौत मर चुका हूँ
कई जन्म ले चुका हूँ,
कई वार जी चुका हूँ, मर चुका हूँ।

* * *

एक ने था कहा
'मदिरा जीवन की कुंजी है
मधुमय यह संसार
बहुत पीयो, बहुत जिओ

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

यही शत शरद का सार !
अमृत की यह बहन सगी है
अमर भले न बनाये
पर उमर बढ़ाती है
इसमें डूब कर ही नैया आगे जाती है।'
मैंने भी पी डाली
हद कर डाली
और फिर पड़ी जब काल की छाया काली
तब बोली दुनिया
देखो बेचारे ने अपनी क्या गति कर डाली
पी-पी कर विष की प्याली
अल्प आयु में मौत बुला ली

* * *

एक शतायु बुजुर्ग मिले
बतलाया—
नैसर्गिक नियमों का पालन
खान पान में संयम
कहा—
'दूर रहो सभी नशों से
सभी प्रकार की बुरी आदतों से
कम खाओ, गम खाओ !'
वह पथ भी अपनाया
तप बड़ा कठोर रचाया
'रसना' तड़पती रही
'मन-शरीर' की खटकती रही
ऊब ने खूब किया
कमसिनी में ही रगड़ दिया

* * *

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

कोई शतायु धूम-पान को जीवन की चाभी बतलाते
तो दूसरे
उससे मीलों दूर रहने का मन्त्र सिखाते
एक जोग की माला जपते
एक भोग की महिमा बतलाते
मधुमय धरती पर
श्रेय-प्रेय के जगड़े

* * *

कोई स्वास्थ्य के सच्चे नियम दिखाते
कोई जीने का रहस्य दृढ़ मनोबल बतलाते
कहा किसी ने मुटापा दुश्मन उम्र का
आँकड़े हैं बतलाते
पर
दुर्बल भी तो
नहीं दूर तक चल पाते !

* * *

एक मन्त्र मिला—
ब्रह्मचर्य ही जीवन है
बहुत जिया वो
लँगोट का सच्चा जो—
यह नुस्खा भी आजमाया
कामदेव ने
धनुष चढ़ाया
फौरन पागलखाने पहुँचाया
उपाय एक न चल पाया !

* * *

कभी सौ तक पहुँचा तो
देखा

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

तब तक
कान के चैले उड़ गये
खेत की सुनकर खलिहान की कह गये
आँख के अन्धे बने
नाम के नयनसुख रह गये
हुए वेदान्ती
रसहीन हुए
'रसना' से क्षीण हुए
शिथिल हुए अंग-अंग
बिगड़ गये सब रंग-ढंग
कलप गये, बिलख रहे,
हाय, क्यों न पहले ही मर गये !
ये सब दुर्गतियाँ सह चुका हूँ
तिल तिल कर मर चुका हूँ
कई जन्म ले चुका हूँ,
कई बार जी चुका हूँ, मर चुका हूँ ।

* * *

मिले एक विज्ञानी
बोले 'सौ क्या
दो चार सौ वर्ष जियो !
नुस्खा मैं बतलाये देता हूँ
चाहे तो खरीद कर पियो !
अमृत सी मछली—कार्प* एक
जो प्रलय पयोधि में जीती है
उसका शोरबा पी डालो

---

* 'कार्प'—हक्सले, आल्डस—अपनी पुस्तक 'आफ्टर मेनी ए समर डाइज ए स्वान' में ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

फिर जितना जी चाहे जी डालो !
किन्तु,
खतरा एक है सुन लो
बात जरूरी है गुन लो
जीवन की यह गाड़ी चलती रहती
कभी न रुकती, बस चलती रहती !
आगे का पथ रोकोगे
यह पीछे को भागेगी
'अमर' हुए तो सीढ़ी से नीचे उतरोगे
'विकास-वृक्ष' की मोटी डालें पकड़ोगे
बन जाओगे बनमानुस, बन्दर
कच्छप, मछली, मेढक
केंचुआ चींटी
काई, भुखड़ी या जीवाणु
तब,
दोष मुझे मत देना
अमर हुए हो तो अमर बने रहना।'

* * *

इस बार
एक दार्शनिक से टकराया
प्रश्न सुन कर वह मुस्काया
बोला 'सौ वर्ष ?
कौन से सौ वर्ष ?
ब्रह्मा के या चींटी के ?
अणु के या परमाणु के ?
प्रोटान के या मिसॉन के ?
घड़ी तुम्हारी केवल इस धरती पर चलती है
अन्तरिक्ष के अनन्त विस्तार में—

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

धुलिकण से भी छोटी जो,
और अन्तरिक्ष
जहाँ दिन रात नहीं होते
शाम प्रभात नहीं होते
घण्टे-घड़ियाल नहीं होते
समय जहाँ पर लम्बी ताने सोता है
पथ-प्रकाश का समय-हीन ही होता है
पढ़ो 'आइनस्टाइन' का सिद्धान्त
यहाँ समय सदा 'संबंधी' होता है
देखो होयल-नारलीकर का समय ज्ञान
जिसमें समय सदा सर्वदा 'एकमुखी' होता है
माना समय एक नया आयाम
किन्तु क्या वह शहर के घण्टाघर की
सुईयों के इशारों पर चलेगा ?
सौ शरद की माप
साफ, खुली, कोरी-बकवास
केवल मान लेने की बात
सीधा है हिसाब—
जितने पल हँस कर जिये
जितने पल सुख कर जिये
जितने पल जिन्दादिल जिये
जितने पल परहित कुर्बान किये
बस उतने साल जिये
बड़े भागवान वो
जो घंटों हँसा किये,
आँसुओं की नदी में
हँस-हँस के दुख व्याल से बचा किये,
बहुत जिये वो बहुत जिये

* * *

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

सुनो ओ घोघा बसन्त—सौ बसन्त
घिस-घिस कर
रिस-रिस कर
मुर्दा-दिल
अगर जिये तो क्या खाक जिये ?

* * *

युग को धन्यवाद
ज्ञान मिला,
प्रकाश मिला,
सच्चा जीवन हास मिला,
सौ शरद मैं जी गया
आज सौ पलों के हास में
मस्ती मिली मुझे
नुस्खे की तलाश में

* * *

खोज पूरी हो गयी
बात पूरी हो गयी
जिसे कहने के लिए
कई जन्म ले चुकाहूँ
कई बार जी चुका हूँ, मर चुका हूँ।

* * *

अब न मरूँगा
मौत के हर पल जिऊँगा
हँसूंगा
हँसूंगा
बहुत हँसूंगा !

•

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

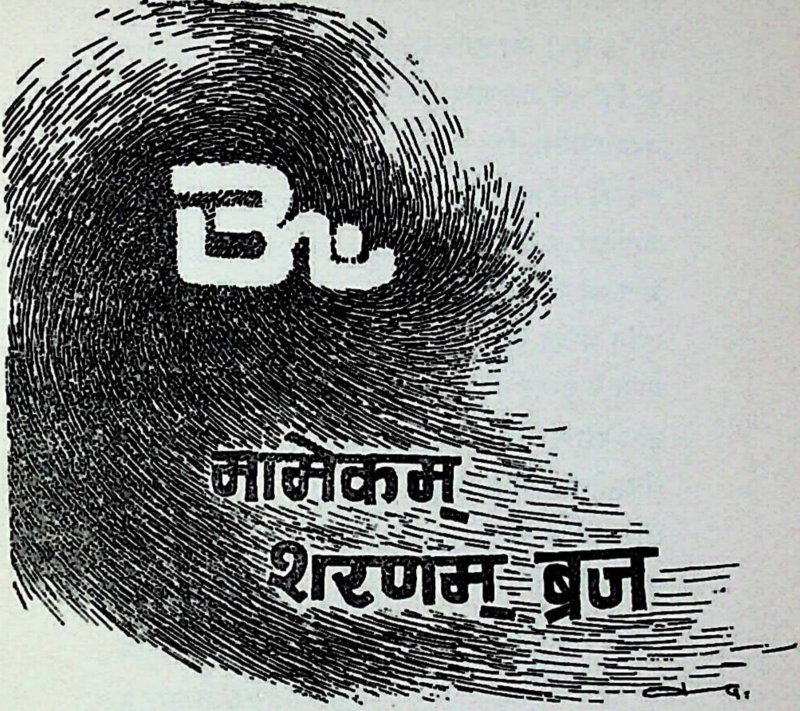

मेरे साथ आओ
मैं तुम्हें शान्ति दूँगा
एक नया धर्म दर्शन दूँगा
नया ज्ञान-विज्ञान दूँगा !

* * *

मगर आना तो—
'क्रूस" तोड़ कर आना
प्रतिमाएँ विर्सजित कर
मस्जिदें गिरा कर
धर्म के सारे प्रतीकों को मिटा कर आना।
इसलिए नहीं कि—
ईसा मसीह नहीं थे,

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

या कि प्रतिमा पत्थर हो गयी हैं
या कि खुदा अब हाजिर नाजिर नहीं हैं
या कि धर्म अब जीवन का आधार नहीं हैं
मगर इसलिए कि—
धर्म की धार्मिकता छिप गयी है
आडम्बर के कलुष में
अनास्था की कीच में !
दर्शन भटका है
वादों के सुन्दर-वन में !
बलि पशु-सी
चीखती फिरती है 'शान्ति',
और धर्म के नाम पर
उन्माद-हिंसा का
मोह-मद-लोभ का
नफरत सने रोष का
उमड़ता है ज्वार !
अतएव
मेरे साथ आओ
मैं तुम्हें शान्ति दूंगा
एक नया धर्म-दर्शन दूंगा
नया ज्ञान-विज्ञान दूंगा !

* * x

मगर आना तो—
किताबें जला कर आना—
रूढ़ियाँ परम्पराएँ मिटा कर आना
घंटे गिरा कर, दिये बुझा कर आना
आस्था की जर्जर प्राचीरें गिरा कर आना।
इसलिए नहीं कि—

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

"किताबें" अच्छी नहीं हैं
"रूढ़ियाँ" "परम्पराएँ" बेमानी हैं
या घंटे अब चेताते नहीं—
या दीप आलोक फैलाते नहीं !
इसलिए भी नहीं कि—
आस्था अब अन्तर को सहारा नहीं देती !
बल्कि इसलिए कि
किताबें 'कानून' बन गयीं
पथ-निर्देश बेड़ियाँ बन गये
लिखा था क्या और मतलब क्या लग गये !
रूढ़ियाँ आँख की पट्टियाँ बन गयीं
परम्पराएँ दासों की 'सट्टियाँ' बन गयीं
घंटे झगड़े कराने लगे
और दीपक घर में ही आग लगाने लगे !
आस्था सलीब बन गयी
जिसपर इन्सानियत टँगी रह गयी
युग कहाँ पहुँचा
और ये कहाँ रह गये !
इसलिए
मेरे साथ आओ
मैं तुम्हें शान्ति दूँगा
एक नया धर्म-दर्शन दूँगा
नया ज्ञान-विज्ञान दूँगा !

* * *

मगर आओ तो
मजहब से मुँह मोड़ कर आना
विज्ञान को वहीं छोड़कर आना

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

वादों के घरौंदे तोड़कर आना
देशों की नकली सीमाएँ मिटा कर—
इन्सानी भेदों को भुला कर आना।
इसलिए नहीं कि—
मजहब में कोई कमी है
या विज्ञान में कुछ कसर है
वाद भी शायद सब सही हैं
सीमाएँ भी सम्भव है सच्ची हों
इंसान में रूप-रंग के भेद भी होते ही हैं!
मगर—
उस मजहब से
मेरी दुनिया का उद्धार न होगा
जो 'जिहाद' की आवाज देता है
जो गाल पर थप्पड़ मारनेवाले का हाथ काट लेता है!
मानव को जो अन्त्यज, म्लेच्छ, विधर्मी कहता है
प्रेम के मन्त्रों का अर्थ जिसमें सबसे नफरत ही
रहता है!
उस विज्ञान से—
मेरी दुनियाँ में उजाला न होगा
जो मानव विनाशहित 'एटम' तोड़ा करता है
जो नक्षत्रों पर शासन के सपने जोड़ा करता है
जो अपनी दुःसत्ता से प्रकृति की राहें मोड़ा करता है!
उन वादों के वाग्जाल से
मेरी दुनिया में रामराज न होगा
जो इन्सानों को लड़वाते हैं,
जो इन्सानों को कटवाते हैं,
जो इन्सानों में नफरत करवाते हैं!
उन सीमाओं से

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

मेरी दुनिया बँध न सकेगी
जिनसे
मानव की आजादी रौंदो जाती है
दुश्मनी भाई-भाई में ठानी जाती है
भूमि गोपाल की बाँटी जाती है।
ये भेद-भाव
मेरी दुनिया में घुस न सकेंगे
जो एक पिता की सन्तानों को अलगाते हैं
जो गोरे-काले दंगे करवाते हैं
जो शोषण के पहिये के आरे बन जाते हैं !
अतएव
मेरे पास आओ
मैं तुम्हें शान्ति दूंगा
एक नया धर्म दर्शन दूँया
नया ज्ञान-विज्ञान दूंगा !
आओ कि यहाँ—
हर इन्सान सिर्फ इन्सान होगा
उसका न कोई नाम होगा
हर तन का अपना मजहब होगा
हर राही का अपना पथ होगा
विज्ञान करेगा, केवल सेवा मानवता की
वादों का कोई काम न होगा
दर्शन की छाया में
सोयेगी शान्ति टाँग पसार
फिर उतरेगा 'सलीब' पर से
बेटा खुदा का, वो इन्सान
नयी सृष्टि बनेगी—
नयी दृष्टि मिलेगी

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

भगवान फिर स्थापित होंसे
स्वर्ग के सिंहासन पर !
किन्तु
इस बार शैतान का सृजन न होगा
अत्याचार भरा सैय्यादी खेल न होगा !
मानव होगा,
सुख की धूप सुनहली होगी,
अमन के आँगन में—
बरसेगी बरसात प्यार की !
अगर यह सब पसन्द है तो
मेरे साथ आओ।

•

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

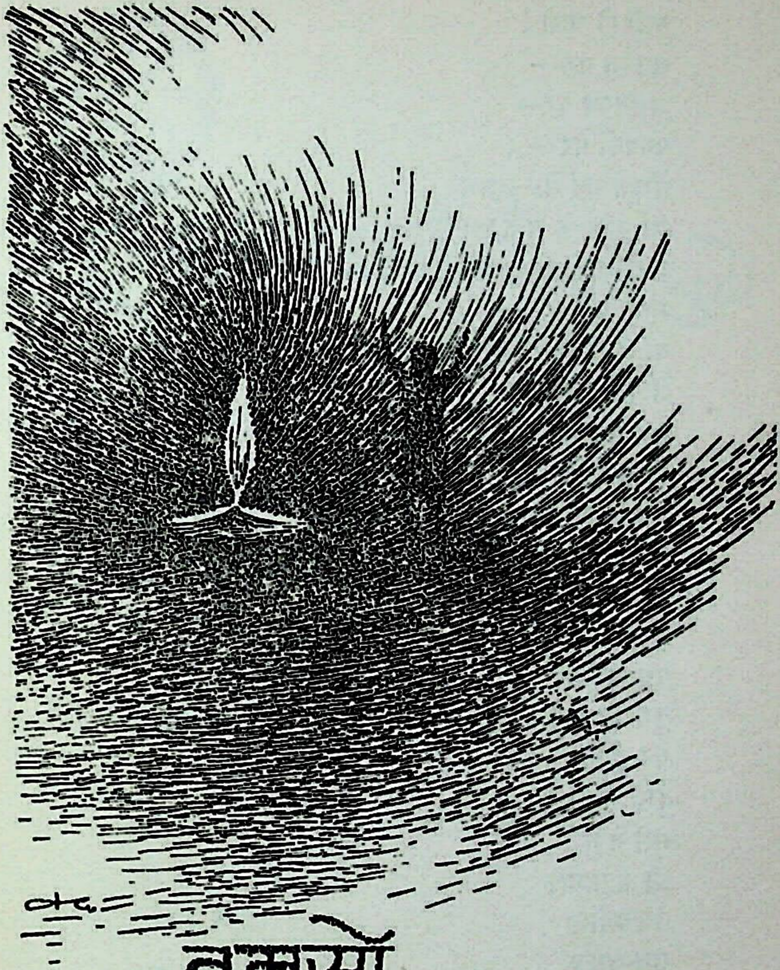

तमसो मा ज्योतिर्गमय

ले चलो
तम से ज्योति की ओर ले चलो
या ज्योति से तम की ओर ले चलो
तम से और गहन-तम की ओर ले चलो

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

कहीं ले चलो !
सतपथ पर—
असतपथ पर—
पगदंडी पर—
बीहड़ वन में—
या नगर के सुन्दर-वन में—
जहाँ चाहो ले चलो !
मृत्यु के मुख में—
या अमरत्व की ओर ले चलो !
मैं क्यों चिन्ता करूँ
तुम मेरे कम्पास हो
दिशा निदेश दो—
पथ निदेश दो—
और ले चलो !
यदि पीड़ा होगी
तुम्हें होगी,
पथ भूलूँगा
तुम भटकोगे !
देर होगी—
तुम्हें होगी !
मुझे क्या
ओ महाप्राण
तम-ज्योति
सत-असत्
मृत्यु-अमृत
सब रूप तुम्हारे !
मंजिल एक, नाम अनेक
मैं तो
केवल अंश तुम्हारा
जिधर ले चलो जाऊँगा।
जिस पथ से निदेश करोगे
घर आऊँगा।

●

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

सम्भवामि युगे-युगे

कहा—
"तुम यों ही खड़े रहो
तप तपो—मैं आऊँगा !
जमने दो पाँवों पर कीचड़
मैं आकर घुलवाऊँगा।
जुटने दो पापों का अम्बार,
छन में फूँक उड़ाऊँगा।
अवतार धरूँगा, मैं आऊँगा !
धर्मचक्र प्रवर्तन होगा
धीरज धरो संयम करो
यों ही खड़े रहो !"
किन्तु नाथ
यह धरती चलती है,
परिवर्तन की माला जपती है,
इस चक्के पर धीरज संयम की बातें ?
चलते पहिये पर स्थिर रहने की बातें ?
इस दुनिया में फैशन बदला करते हैं,
नित नयी परिभाषाएँ बनती हैं,
जप तप की तकनीकें बदला करती हैं,
पाप-पुण्य के मानक बदला करते हैं।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

तो बोलो—
कौन से पाप जुटाऊँ ?
कैसे स्थिर खड़ा रहूँ ?
कैसे तप तप जाऊँ ?
अगर कभी पाप बढ़ा भी,
कंचन पर मैल चढ़ा भी,
बड़े काँइयाँ दुनिया वाले,
विद्रोह जगा देते हैं,
आग लगा देते हैं,
जल जाते हैं कलुष सभी
फिर सोना खरा बरा लेते हैं।
तो बोलो कैसे पाप जुटाऊँ ?
कैसे स्थिर खड़ा रहूँ ?
कैसे तप तप जाऊँ ?
नहीं सागर की लहरों पर—
दर्पण तल की शोध व्यर्थ है !
इस भीषण झंझावात में
बालू के किले बनाने की बात व्यर्थ है !
असम्भव शर्तें न लगाओ—
बात समझो, ओ दुराग्रही,
अब आओ।

•

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

उभयोर्मध्ये

सारथी ले चलो
कर्मक्षेत्र, धर्मक्षेत्र
उस कुरुक्षेत्र में
रथ ले चलो—
जहाँ
आमने सामने
'सत्य' और 'अनृत' के सैन्य
युद्धरत
खड़े संग्राम करते !
सारथी, ले चलो
और दोनों के बीच
रथ खड़ा करो ।
मैं हनन करूँगा
झूठ का कटक,
मैं संहार करूँगा
'अनृत' के साथियों का
लोभ, मद, मोह, पाप का
ईर्ष्या, द्वेष, लालच और असंतोष का
सारथी, ले चलो—

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

हाँ, यहीं रथ खड़ा करो—
किन्तु केशव
क्या यही वे झूठ के सैन्य हैं ?
क्या यही वे पाप के समूह हैं ?
किन्तु इनका संहार कैसे होगा ?
इनका परिहार कैसे होगा ?
ये सब तो अपने हैं—
हाँ, ये झूठ तो वही हैं
जो कभी मैंने बोले थे—
ये लालच, द्वेष सभी मेरे हैं
ये पाप के कटक सब अपने हैं
इनका संहार कैसे होगा ?
इनका परिहार कैसे होगा ?
सारथि, चुप क्यों हो ?
उतरो रथ से
फिर गीता का उपदेश करो ।
फिर वह सत्य ज्ञान मुझमें भरो ।
समझाओ न मुझको
कैसे न कोई मरता है,
कैसे न कोई मारता है,
केवल धर्म का अधिकार मुझे ।
पर ठहरो,
पहले मुझे पक्षापक्ष का निर्णय कर लेने दो—
किस ओर से लड़ूँगा मैं
यह तय कर लेने दो !
मुझे समझने दो—
इन झूठों में सत्य कितना है ?

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

ये सत्य के सैन्य कितने झूठे हैं ?
इन पापों ने कितना पुण्य किया है ?
ये पुण्य कितने पाप पंक में डूबे हैं ?
कहाँ से सत्यनारायण की पंक्ति आरम्भ होती है ?
नहीं केशव, यह महाभारत अजब है
यहाँ रथ मध्य में खड़ा हुआ ही कब है ?
चलो कहीं वीराने में चलें,
इस द्वंद्व से,
इस मायावी युद्ध से,
दर्पणों के खेल से,
चलो कहीं दूर चलें !
वहाँ तुम अपनी 'गीता' गाना
मैं सुना करूँगा
अच्छा गाओगे तो
जोर से करतल ध्वनि करूँगा।
फिर तुम—
थके घोड़ों की मालिश करना
और मैं
लेटकर रथपर विश्राम करूँगा
लड़ने दो इन झूठे-सचों को,
जो मर नहीं सकते बेहया,
उन्हें मार कर मैं क्या करूँगा ?

•

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

मैं
जो इस घर में रहता हूँ
सदा डरा डरा सा—
हर घड़ी अधमरा—
मरा-मरा सा !
बहुत डरता हूँ
काँपा करता हूँ
कि
काँच का घर ये
न जाने कब टूट जाये
फूट जाये।
नाजुक बहुत है,
कच्चा कोमल
जरा सा शीत गर्मी
धूप छाँव
चट से चटकता
बेलोच,
कुड़कीला,
काँच का घर ये।
और
यह दुनियाँ

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

जहाँ
जीव खाकर जीव जीते
जहाँ
हिंसा के सतत् व्यापार होते
छन-छन
मिटते, बनते
नये पुराने होते
परिवर्तन के चक्कर चलते
संघर्ष अस्तित्व के जमे
जीते वही सिद्ध सबल जो
आँधी-पानी, भँवर-जाल
सिंह व्याल
काल के उन्मत्त ताल
झकझोरती झंझा कराल !
भूकम्प जो गिरा दें
सुदृढ़ दुर्ग,
अचल प्रासाद;
चतुर्दिक
विनाश की बाढ़ !
कब तक सह सकेगा
आघात
काँच का घर ये ?

* * *

'अगर घर ये टूटा
अगर बसेरा ये छुटा
क्यों करता परवाह
नया मिलेगा
मत घबरा !'
'वासांसि जीर्णानि यथा विहाय

४

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

नवानिगृह्णाति नरोऽपराणि'
वैसे ही—
'शरीराणि विहाय
जीर्णान्यन्यानि संयाति नवानिदेही'
बतलाते है पण्डित,
गाते हैं ज्ञानी,
मुझको मेरी शक्ति दिखलाते हैं,
पथ बतलाते हैं विज्ञानी
समझाते हैं
मोह का पिंजड़ा
काँच का घर ये !
और
मैं
अजर-अमर-अजन्मा
सृजन विलय के चक्कर से ऊपर,
मैं
जो शस्त्रों से छिद नहीं पाता
पावक नहीं जिसे जलाता
जल न मुझे डुबाता
पवन न मुझे सुखाता !
हाँ मैं
अछेद्य,
अदाह्य,
अक्लेद्य और अशोष्य !
मैं,
नित्य-सनातन
अचल-अव्यक्त-अचिन्त्य !
मैं,
अवध्य-अविकारी

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

अशोच्य-अविनाशी
अप्रमेय !
मैं,
कौमार्य यौवन जरा से मुक्त !
मैं जन्महीन,
मैं मरणहीन,
'था', 'हूँ', 'होऊँगा' के
कालचक्र से बाहर !
मैं शाश्वत और पुरातन !
मैं न मरूँ, ना मारूँ !
इतना गुण निधान,
ऐसा शक्तिमान,
पर
क्षणभंगुर मेरा
काँच का घर ये !
भस्म जो हो जाता
एक स्फुलिंग से !
विकल रहता
काम के एक पुष्प शर से !
अश्रुजल में ही
डूब जाता !
एक ठेस से
ढह जाता
काँच का घर ये !
किन्तु
जैसा भी है
अच्छा है
आलोकित
सविता के विमल प्रकाश से,

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

आनन्द के अतुल आह्लाद से,
इसमें पैठकर जाना मैंने
अपना महद् यश,
पहिचाना
उस अनाम अलौकिक को,
जिसका अंश मैं
सत्‌चित् आनन्द भरा
श्याम सलोना मेरा
काँच का घर ये !
मोह की सीमेंट ने बाँधे हैं
पाँव मेरे
घर की हर दीवार से,
बहुत कठिन है
निकलना किसी भी द्वार से,
गूँजता है जिसमें
अनहद नाद,
गूँजते हैं जिसमें
अगणित राग,
हो उससे कैसे विराग ?
पण्डित कहते—
तोड़ो यह नाग फाँस
यह माया का मकड़ीजाल
साहस से उठो
करो सत्य में विश्वास
माभैः
मत डरो
मत करो शोच
रक्खो याद
'नानुशोचन्ति पण्डिताः'

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

सच होगी उनकी बात,
किन्तु
मन में
सन्देह एक—
आशंका प्रबल
कम्पित जो करती है
विचलित करती रहती है !
बात ही भय की,
विषय सोच का,
इतना कोमल—
इतना नाजुक—
भग्न हो जो—
बात के पथराव से
काँच का घर ये !
और
घर ये अगर टूटा
अगर फूटा तो
नया घर !
ऐसा स्फटिक निर्मल काँच सा
ऐसे भरे सुप्रकाश का
कौन जाने
मिले, न मिले !
फिर
कौन जाने
दूसरा घर भी
मिले, न मिले !
सम्भव है
अनेक कल्प तक
फिर किसी पथ भूली

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

बदली सा
जनक-जलद की शोध में
भटकना पड़े ?
इसलिये
यह जन्म,
यह मानव तन,
यह सुखद बसेरा,
प्रिय जो अब
बहुत हो चला है—
'पिंजरा' कह कह कर जिसे
ज्ञान ने बहुत छला है,
सुख दुःख के
शत रंगों में रंगा,
कामना है यही
प्रार्थना है यही
कभी न टूटे
मेरा
कांच का घर ये !

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

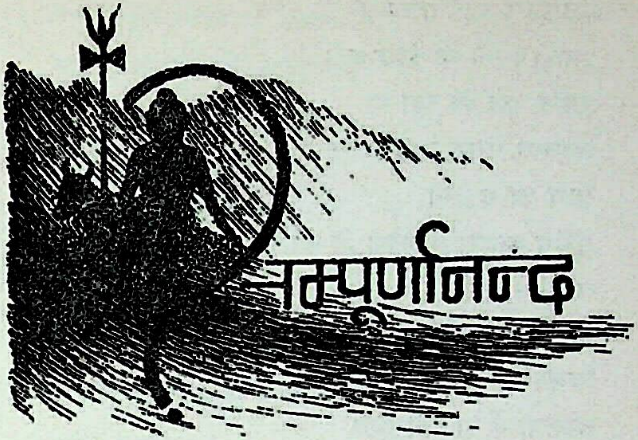

'आनन्द क्या है ?'
एक दिवस
सुरम्य कैलाश पर विराजमान
विश्वनाथ देवाधिदेव महादेव थे,
प्रश्न किया सहसा
मृणमय शम्भु अनूप से—
पर्वत कन्या पार्वती ने
भगवती मैया अन्नपूर्णा ने
'आनन्द क्या है ?'
हिमगिरि के आँगन में
बर्फ कुछ पिघल चली थी
पहिना था धरा ने हरित परिधान,
उर्मिल था निलाभ स्वच्छ आसमान,
इठला रही थी बासन्ती बयार
और निर्झर हर-हर गा रहे थे,
मुद मंगलमय सब समाज था
आनन्दमयी सृष्टि थी
चहुंओर कामराज था ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

तिस पर भोले बाबा ने
तगड़ी छानी थी आज बूटी
सरूर कुछ आ रहा था
अष्टचक्र, नवद्वार डाँक कर
प्राण का सफीना
तुरीय कन्दरा में प्रवेश हो करने जा रहा था,
तभी—
इक बिजली सी कौंधी—
विजन वन में कोयल कूकी—
तरुलता में प्राण जगाता
मन्द सुगन्ध पवन का झोंका आया
आनन्द बूँद एक उछली
कौतूहल में डूबी
शैलसुता तब बोली—
'यह आनन्द क्या है ?'
एक प्रश्न जगा
पथ अवरोध बना—
दिगम्बर पथिक वहीं रुका
ज्ञानानन्द देव मुस्काये
बोझिल नयन अधखोले
बोले—
'हूँ—आनन्द ?
आनन्द क्या है ?
आनन्द वो है—'
नयन से इंगित किया—
नन्दी की ओर
और
फिर डूब गये योगेश्वर
पुरअयोध्या के अलौकिक तड़ाग में,

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

सहस्त्र दल कमल था जिसमें खिला
था नव आकाश दिव्य आनन्द भरा !
वह
दो सिर, चार सींग
सात हाथ, तीन पग वाला बैल अनूठा
आकाश से शक्ति ले
जोर से डकराया
शीश हिलाये, पूँछ घुमायी,
कृपा दृष्टि पा स्वामी नन्दीश्वर की
मुदित हुआ
हर्षाया !
'यह बूढ़ा बैल— !
ये—ये आनन्द है ?
विस्मित हो गौरी झुँझलायी
इन्हें तो हर समय हँसी सूझती है।
बेटा स्कन्द तू बतला
यह आनन्द क्या है ?'
मोर नचा कर
देव सेनापति बोले—
'माँ,
आनन्द समर है,
तारक वध है,
शत्रु पराजय है,
पौरुष है—'
'समझ गयी, समझ गयी
तुझको तो हरदम
लड़ने भिड़ने की बात
तू खेल अपने अस्त्र-शस्त्र से

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

मैं विद्यावारिधि से समझूँगी
अपने हेरम्ब को जाँचूंगी'
और
गजानन
व्यग्रस्त थे
अपने वाहन की तलाश में—
माँ का प्रश्न सुन कर चौंके
छोटी छोटी आँखें मूंदी
शूपकर्ण हिलाये
बुद्धिविधाता चकराये—
फिर सूँढ़ उठाकर बोले
'माँ
आनन्द अन्न है
मनमोदक है
आनन्द निर्मल जल का
गाता निर्झर है!
आनन्द पवन है
शीतल मन्द सुगन्ध है,
आनन्द, उदर में जलती
शीतल जठराग्नि है,
आनन्द यह काया है
यज्ञ के हवन कुण्ड सी
पड़ती जिसमें हर आहुती
नित नये आनन्द की सृष्टि रचती
क्षणभर को परिपूर्ण होती
फिर नव आनन्द को मचलती
यह सर्वदानन्ददायिनी अग्नि ही तो—'

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

'बस-बस
समझी
तू बस एकदन्त है
एक सूत्र लम्बोदर है
हरदम खाने की बात
हर प्रश्न मोदक में लिपटा।'
'सब बड़े विद्वान बने हैं
महिमामय महान बने हैं
एक प्रश्न छोटा सा
एक प्रश्न सीधा सा
सुलझा न सके।'
किन्तु—
वे किसी और लोक में थे
सूर्य-चन्द्र
ज्योति-तम
प्राण अपान
श्वास-निःश्वास
नयन द्वय
मूंदे
कान बन्द किये
अनहद रव में डूबे
गहन गहरी तुरीय गुहा में
अपूर्व आनन्द लोक में
उनके प्राण थे जगे !
और
त्रयम्बक का
तीसरा नयन
अचल केन्द्र बिन्दु

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

स्थाणु
वह अग्निरूप
मदन दहन कर
अब बुझा बुझा सा था !
नीलकण्ठ
निलाभ सा नीरव था,
बालेन्दु
अपनी दिव्य आभा लिये
भाल पर बेबस सा लटका था,
प्रतीक्षारत था
कि योग निद्रा टूटे तो
मैं देव को चेतना दूँ
दिव्य दर्शना दूँ !
वे लहराते
किसी अव्यक्त आनन्द में
भुजंग कालकूट
गलहार चन्द्रमौलि के
अपने अपने फन समेटे
चुप चुप से लेटे थे !
और
स्वर्ग की बेटी गंगा
उतरी थी जो देवलोक से धरा पर—
शिव की खुली जटा पर,
गंगा वो जीवन सरिता
सर्वपापहारिणी, मोक्षदायिनी
अमृत जलधार गंगा,
अन्तहीन अनादि प्रवाहिनी
अमित आनन्ददायिनी गंगा,

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

विश्व व्यापार सी उलझी
जटा जूटों में खोयी थी,
उस अन्तहीन शीश पर सोयी थी !
त्रिगुण त्रिशूल शान्त था,
मौन था डिम-डिम डमरु रव !
'कोई तो मुखर हो
कोई तो प्रश्न का उत्तर हो ?'
शिवा—
प्रश्न-पाश में उलझी
चिन्तन में डूबी !
शिव—
अमृत शव बने
चिरन्तन स्थाणु बने !
और
प्रश्न बनी नाचती
प्रकृति नटी,
महामाया !
सावन घन-सा
प्रश्न उमड़ उमड़ कर
अपर्णा से पूछता—
'जब रुद्र जागते हैं,
जब शम्भु नाचते हैं,
जब अमृत-चषक छलकता है
ताण्डवतालों में
वह कौन सा दिव्य आनन्द ठमकता है ?'
और शैलनन्दिनी—
निराश हो
निढाल बैठी
'हा, आनन्द क्या आज अवसाद बन जायेगा ?

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

आह्लाद का मूल तत्त्व
क्या न कोई बतलायेगा ?'
तभी कहीं से
गगनभेदी गर्जना गूंजी—
'मैं यहाँ हूँ जी।'
चौंक कर देखा
रुद्राणी ने—
वह बूढ़ा बैल
कुछ कह रहा था—
'हाँ माँ
मैं नन्दी हूँ
आनन्दी हूँ
मैं वृष हूँ, वृषभ हूँ
प्राण हूँ, काम हूँ
इन्द्र हूँ, पुरन्दर हूँ
ज्योतिर्मय सहस्त्ररश्मि सूर्य हूँ
मैं पशुपति महादेव,
मैं शक्ति त्रिगुणात्मका,
मैं विद्यात्रयी
मैं बीज हूँ
मैं भुवन की रेत हूँ
हाँ
मैं आनन्द हूँ !
आनन्द का प्रतीक हूँ,
आह्लाद का मूलतत्त्व हूँ,
अस्तित्व हूँ भुवन का,
सुख की अकथ अनुभूति हूँ,
मैं मधुमान उर्मि हूँ
आनन्द लहरी हूँ

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

मधुमान सिन्धु हूँ
हर प्राण मेरी बूँद एक,
हर चित्त मेरी विजय एक,
वर्णनातीत स्वाद जिसका
मैं वह मधु हूँ
महारास का विधु हूँ !
हाँ
मैं ब्रह्म हूँ
सत्-चित्-आनन्द हूँ
परमानन्द हूँ
अखण्ड मण्डल में व्याप्त,
आनन्दमानन्द कर
भवस् भवानी,
अर्धनारीश्वर शिव हूँ
रहस्यमयी मैं
ताण्डव की वह आनन्दमयी गति—
अणु-अणु में जो नाचती !
मैं कैवल्य सदानन्द
मैं ब्रह्म निरानन्द
मैं अमूरत चिदानन्द
मैं मधुवन का वंशीरव
अनहद नाद का स्वरानन्द !
तू जिसे ढूँढती
वही मैं—
आनन्द रूप हूँ,
महिमामय अनूप हूँ
मैं पूर्ण हूँ
परिपूर्ण हूँ
हाँ मैं आनन्द हूँ

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

सम्पूर्ण-आनन्द हूँ।'
और
सचकित उमा देखती रही
समूचे आकाश को भर रहे
धवलस्फटिकाकृति—
दिव्य ज्योतिर्मय—
सूर्यकोटि समप्रभामय—
अपूर्व आलोक भरे
उस आनन्द को !
वृषभ रूप ब्रह्म को !
और
शिवा-कान्त गंगाधर
विश्वनाथ
मुदित मुस्कुराते रहे,
भावभीने निज भक्तों पर,
कल्याणसुधा बरसाते रहे।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

अनुभव अजब अलबेला
लाखों करोड़ों की भीड़ में
'मैं' अकेला।
बूँद का कहना सागर से—
कि मैं तुमसे अलग हूँ।
कंकरी इठलाकर कहे
नगपति से
कि मैं तुमसे अलग हूँ।
एक पत्ती ने कहा—
'मेरा नाम पेड़ से अलग लिखना'
अणु ने फटकर—
घोषित किया, अस्तित्व अलग अपना।
सहम कर जीव ने
ब्रह्म के अपरिमित विस्तार में
मन ही मन कहा
कि 'मैं तुमसे अलग हूँ'।
बँधु—
यह अकेलापन खाता रहेगा,
बूँद का अहम घबराता रहेगा,
कंकरी अकेली ठुकरायी जायेगी,

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

पत्ती मरमर के यही राग गायेगी,
अणु का सूना आकाश यों ही रिक्त बना रहेगा
'जीव' प्राण के जंगल में यों ही भटका करेगा,
अलगाव है तभी तक तो अकेलापन
भीड़ से परे ही तो एकाकी सूनापन,
तथ्य की बलिशिला पर
शीश धर दो
सत्य का खड्ग गिरने दो
मैं, मैं, मैं का आर्तनाद मौन होगा
केवल तुम होगे, केवल तुम होगा
बूंद, पत्ती, कंकरी और अणु
भीड़ में एकाकी भटकता मैं
ब्रह्म-जीव, चल-अचल और स्थाणु
सब तुम, तुम, तुम—केवल तुम
तत् त्वमसि—तत् त्वमसि ।

•

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

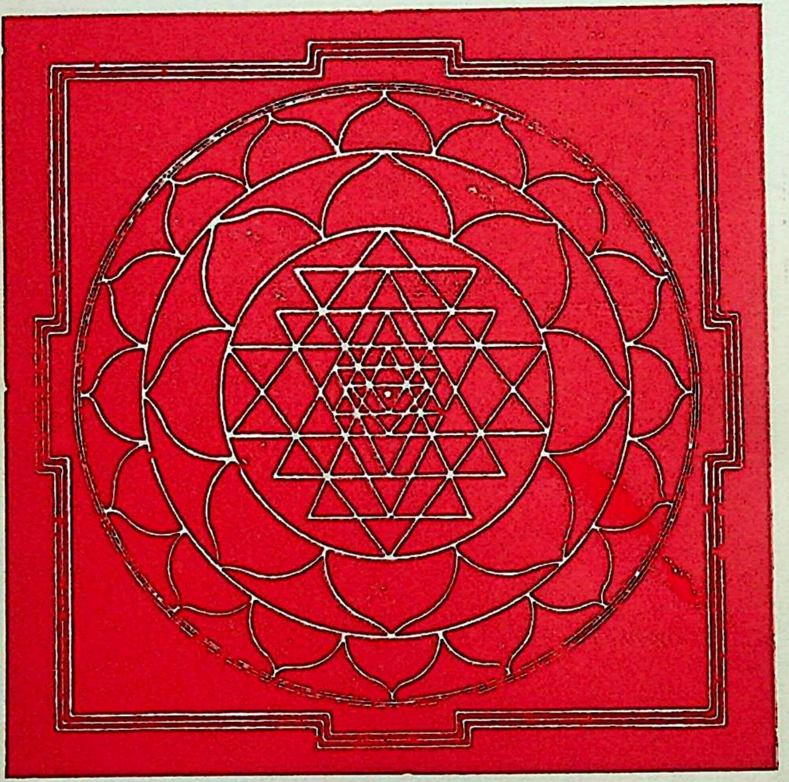

श्रीमाता का मन्दिर

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

श्रीमंदिर

मैया,
मन्दिर विशाल, महिमा अपार,
अपरम्पार।
बाह्य प्राचीर पर विराजतीं दस सिद्धियाँ[1]
अन्दर दशो दिग्पाल[2]
मातृकाएँ आठ[3]
जिनकी कृपा से
काम क्रोध लोभ मद मोह
मात्सर्य पाप-पुण्य पर
विजय प्राप्त करते भक्त साधक
हरा-भरा त्रैलोक्य मोहन
यह भूपुर
अन्दर तड़ाग विशाल
छोर पर जिसके विराजतीं
मुद्राशक्तियाँ दस[4]
मनोहर
ये यही मन्दिर के दस आधार,
मैया
मन्दिर विशाल, महिमा अपार
अपरम्पार!

---

१. अणिमा, महिमा, लघिमा, गरिमा, ईशित्व, वशित्व, प्राकाम्य, मुक्ति, प्राप्ति, सर्वकाम।

२. इन्द्र (पूर्व), वरुण (पश्चिम), कुबेर (उत्तर), यम (दक्षिण), ईश (ईशान), नैऋत (नैऋत्य). वायु (वायव्य), अग्नि (आग्नेय), ब्रह्मा (ऊर्ध्व), शेष (अधः)।

३. ब्राह्मी, माहेश्वरी, कौमारी, वैष्णवी, वाराही, ऐन्द्री, चामुण्डा, महालक्ष्मी।

४. सर्वसंक्षोभिणी, सर्वविद्राविणी, सर्वआकर्षिणी, सर्वआवेशकारिणी, सर्वउन्मादिनी, महांकुशा, खेचरी, बीजमुद्रा, महायोनि, त्रिखण्डिका।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

रचना विचित्र
सरोवर बीच
कमल कमाल
सर्व आशा परिपूरक
बाह्य पंक्ति में
षोडश पंखुड़ियाँ शोभतीं
जिनपर दशार द्वय वासनाएँ
मन, बुद्धि, अहंकार,
शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गंध
चित्त धैर्य स्मृति नाम
वार्धक्य, सूक्ष्म शरीर
जीवन और स्थूल तन
सोलह आकर्षणी देवियों की[1]
षोडश नित्याओं की
शरण में विराजती हैं
आगे
आठ पंखुड़ियाँ—सर्व संक्षोभिणी
वचन, आदान, गमन, विसर्ग,
आनन्द, हान, उपादान, उपेक्षा
आठ बुद्धियाँ
अष्टार वासनाएँ
अष्ट अनंग देवियों की[2]
छत्रछाया में
शोभायमान

---

१. कामाकर्षिणी, बुद्ध्याकर्षिणी, अहंकाराकर्षिणी, शब्दाकर्षिणी, स्पर्शाकर्षिणी, रूपाकर्षिणी, रसाकर्षिणी, गन्धाकर्षिणी, चित्ताकर्षिणी, धैर्याकर्षिणी, नामाकर्षिणी, बीजाकर्षिणी, आत्माकर्षिणी, अमृताकर्षिणी, शरीराकर्षिणी।

२. अनंगकुसुमा, अनंगमेखला, अनंगमदना, अनंगमदनातुरा, अनंगरेखा, अनंगवेगिनी, अनंगमदनांकुशा, अनंगमालिनी।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

मैया
मन्दिर विशाल, महिमा अपार,
अपरम्पार।

* * *

कमल दल पर
विराजमान
त्रिकोण मयी
भवन रचना विचित्र
आश्चर्य की खान
बाहर त्रिकोण
अन्दर त्रिकोण
त्रिकोण भीतर त्रिकोण
सब ओर त्रिकोण
त्रिगुण त्रिकोण
त्रिगुण यह सृष्टि
त्रिगुणात्मका
तीन देव—
ब्रह्मा, विष्णु, महादेव
आदि, मध्य, अन्त—
त्रयी—ऋक्, यजुः, साम,
मन, बुद्धि, चित्त
शक्तियाँ भी तीन
ज्ञान, क्रिया, इच्छा
इडा, पिंगला, सुषुम्ना
नाडियाँ तीन
तीनों लोक में
तीन की महिमा अपार
मैया,
मन्दिर विशाल, महिमा अपार,

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

अपरम्पार।

* * *

सर्वसौभाग्यदायक
चतुः दशार,
नीलवर्ण त्रिकोण
स्थिति चक्र साकार
मन्दिर के सोपान
सुशोभित जिनपर
चौदह नाडियों की[1]
स्वामिनी,
चौदह देवियाँ
सर्व संक्षोभिणी, सर्व विद्राविणी
आकर्षिणी, आह्लादिनी,
सम्मोहिनी,
स्तम्भिनी, जृम्भिनी,
वशंभरी, रंजिनी,
उन्मादिनी,
अर्थ साधिनी,
सम्पत्तिपूरिणी,
मन्त्रमयी,
देवी द्वंद्व क्षयंकरी
नाडियाँ जो रचतीं
जागृत स्थूल शरीर
झंकृत जिसमें
अर्चना के मजीर
भक्ति के ताल
मैया,

---

१. अलम्बुसा, कुहू, विश्वोदरा, वारणा, हस्तिजिह्वा, यशोवती, पयस्वामिनी, गान्धारी, पूषा, शखिनी, सरस्वती, इडा, पिंगला, सुषुम्ना।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

मन्दिर विशाल, महिमा अपार,
अपरम्पार।

* * *

मन्दिर की दीवार
ललित लाल
दस त्रिकोण का जाल
सर्वार्थ साधक माल
विराजती जहाँ
प्राणों की स्वामिनी
दस देवियाँ
सर्व सिद्धिप्रदा सम्पतप्रदा
सर्व-प्रियंकरी मंगलकारिणी
सर्वकामप्रदा दुःखविमोचिनी
सर्वमृत्यु-प्रशमिनी
सर्वविघ्न-निवारिणी
सर्वांग-सुन्दरी, सर्व-सौभाग्यदायिनी
पंचभूत तन्मात्रा का यह द्वार
शोभा अपार
मैया,
मन्दिर विशाल, महिमा अपार
अपरम्पार।

* * *

आगे मण्डप महान
सर्व रोग हर,
दस त्रिकोण विनिर्मित
बँधी जहाँ इन्द्रिय-वासना
रचना में लगी दश कलाएँ[1]

---

१. रेचक, पाचक, शोषक, दाहक, प्लावक, क्षारक, उद्धारक, क्षोभक, जृम्भक, मोहक, वह्नि।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

दस शक्तियाँ सर्वज्ञा
देतीं जो शक्ति ऐश्वर्य
जो ज्ञानमयी, व्याधिनाशिनी
आधारा पापहरा
सर्व-आनन्दमयी, रक्षिणी
सब इच्छित फल देने वाली,
यह पुण्यस्थली
दर्शन अनुपम कृपाल
मैया,
मन्दिर विशाल, महिमा अपार,
अपरम्पार।

* * *

यह अन्तराल
यहाँ पहुँच गया जो—
सर्व द्वन्द्व से मुक्त हो गया वो
सर्व रक्षा कर
हरित अन्तराल
विशाल
अष्टत्रिकोण-सृष्टिचक्र द्वार
जिनपर
आसीन
वशिनी, कामेश्वरी,
मोहिनी, विमला,
अरुणा, जयिनी,
सर्वेश्वरी, कौलिनी,
देवियाँ आठ
शीत-उष्ण, सुख-दुख
इच्छा-सत्व रज-तम से

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

जो लेतीं उबार
मैया,
मन्दिर विशाल, महिमा अपार,
अपरम्पार।

* * *

प्रविष्ट हो—
गर्भगृह में आ गये
सर्वसिद्धप्रद जो
आद्याशक्ति का जहाँ निवास
शाश्वत त्रिकोण विधान
हर कोण पर विराजमान
देवी महिमामयी
कामेश्वरी,
भगमालिनी,
वज्रेश्वरी।
करो करो जय जयकार
महिमामय, मन्दिर विशाल,
महिमा अपार,
अपरम्पार।

* * *

नमन करो, दर्शन करो,
हो प्रणिपात
हृत्-पुण्डरीक पर
मणिद्वीप पर
विराजमान
सर्वआनन्दमयी
नादबिन्दु रूप
त्रिपुर-सुन्दरी
ललिता,

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

अनुपम अलौकिक,
त्रैलोक्य शक्ति
परम माता,
शक्तिशिवा
प्रकृतिमूला
जिनके चरण युगल पर नत
त्रिदेव, देवाधिदेव
जिनका भृकुटि-विलास
सृष्टि का सृजन विनाश !
नमन करो
शरणागत हो
माँगो भक्ति अविचल
माँगो माँ अम्बे—
सदा विराजो
दीन हीन भक्त के
मन मन्दिर में
हृदय कमल पर !
नमो, नमो,
जगन्माया को नमो, नमो,
नमो सर्व आधार
महिमा अपार
मैया,
मन्दिर विशाल, महिमा अपार,

* * *

आओ
परिक्रमा करें
नव त्रिकोण के इस मन्दिर की
पाँच ऊर्ध्वमुख,
चार अधोमुख,

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

नव जो निराकार शिव के
द्योतक जो मूल प्रवृत्ति के।
पाँच ऊर्ध्वमुख जो
त्रिकोण देवी के
शिवयुवति के,
शक्ति के।
त्रिकोण
जो
ब्रह्माण्ड में
रचते
पंच महाभूत
पंचतन्मात्रा
पंच ज्ञान इन्द्रिय
पंच कर्म इन्द्रिय
पंच प्राण
महाप्राण इस पिंड में
त्वक् असृक,
मांस, मेद, अस्थि,
और
चार अधोमुख
त्रिकोण जो
शिव हैं,
श्रीकण्ठ हैं
चित्त बुद्धि अहंकार मन हैं!
पिंड में
मज्जा शुक्र प्राण जीव हैं!
इन्हीं नव से बनते
एक आठ दस दस चौदह
त्रिकोण

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

जिनमें व्याप्त विश्व व्यापार
सृष्टि, संस्थिति, संहार,
प्रकृति, विकृति,
ब्रह्म की लीला
सचराचर, उत्पत्ति, विकास,
सत्, चित्, आनन्द,
परमानन्द।
आओ परिक्रमा करें
इस मन्दिर की,
मैया
जगदम्ब की,
देवी—
चिरन्तन सत्य की
बिन कृपा जिनके न हो उद्धार
महिमा अपार
मैया
मन्दिर विशाल, महिमा अपार,
अपरम्पार।*

---

* (महामहोपाध्याय गोपीनाथ कविराज जी का आशीर्वाद लेख परिशिष्ट में देखें)।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

पार्वती परिणय

देवों की पुरी
नवद्वार की नगरी
अयोध्या में हृत्-प्रदेश के नीचे
सुमेरु चरण स्थित, श्रोणी की घाटी में
कुण्डलाकार सोयी
सर्पिणी स्वयंभू के अंक में,
भूमा पर
चतुर्दल कमल,
सुगन्ध से
झरता मद
झूमता मत्त ऐरावत
मंदिर में विराजते
चतुरानन ब्रह्मा
सृजन के देवता
लिखते भाग्य के लेख
करतें विधि विधान !
और

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

मानसर के तट पर
समाधि लगाये
निर्गुण निराकार चेतन ज्योतिस्वरूप
साम्ब सदाशिव !
गगन में गूँजते मंत्र
सोऽहं-सोऽहं ।

विकल हैं प्राण
हिमवान के
कैसे पार्वती परिणय हो
कैसे मुक्ति पराये धन से हो ।

उधर पूछती हिम कुमारी
गौरी हैमवती कोऽहं
ओ भाग्य विधाता
कोऽहं
विधि देवता मेरे
अब नये लेख लिखो
नये छंद रचो
जीवनधन प्राणाधार
जन्म-जन्म के स्वामी से
पुनः मिलन के तंत्र रचो ।

कहो उमा से
तप करे
कहो अपर्णा से
साधन करे
इस भू लोक से, प्रिय के सत्यलोक की ओर
गमन करे ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

जगाओ
त्रैपुर की
सर्पिणी को
कि फूत्कार करे,
दुर्गम दुरूह
चक्र पथ पर
संतरण करे !

षट्दल कमल के
सिंदूरी वन में
शुभ्रजल के
विमल ताल
जिनमें बैठे मकर व्याल
अर्द्धचन्द्राकार वरुणालय में
करुणालय में
विराजमान
पालनकर्ता महान्
विष्णु भगवान
भुवर्लोक में
चतुर्दिक रस बरसता
अनूठी छटा

अम्बितमे,
यहाँ क्षितिजल से
क्षुधा शांत कर
आगे बढ़ो
मत रुको देवी
मोह के इस देश में ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

आगे
परासंवित मणिपूर
दशदल
नीलकमल
वन घना
बाल रविवर्ण
स्वस्तिक त्रिकोण
जहाँ अग्नि ज्वाला से घिरे
बैठे वृद्ध रुद्र
मेष सा शेष पवन
मंद मंद झूमता
दमकता है रूप
इस स्वर्लोक में
चक्षु अघाते नहीं
चरण थम-थम जाते
नदीतमे-पावक पान करो
गरल अमृत से
प्राण को त्राण दो
किन्तु देवी रुको नहीं
संहार के इस विकट प्रदेश में
मायामय इस देश में, आगे बढ़ो
ऊपर उठो।

आ गया
द्वादश दल
अरुण कमल का वन
जहाँ वायु झकोरता
मरुत प्रभंजन
जहाँ चंचल मृग सा

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

दौड़ता मन कुलाँचे भरता
जहाँ ईशान रुद्रवास
जहाँ स्वर्णकांति षट्कोण पर
अवस्थित हैं देखो
बाण शिवलिंग महान्
अद्भुत चमत्कार
दिव्य अवदान लिंग छिद्र से
प्रस्फुटित एक
दिव्य हृत्पुंडरीक सुन्दर
अष्टदल कमल प्रभावान ।

स्पर्श से परे
यह महर्लोक
छलनामय जहाँ
लुभाता है अनहद नाद
वंशी की तान
भ्रमर गुंजार
घण्टा घड़ियाल
तुरही करताल
होता रोमांच
डूबते रस में प्राण ।

सौभाग्यकांक्षिणी कुलवंती
मेधाविनी
यहाँ नहीं—
यहाँ नहीं—
आगे चलो
ठहरो नहीं—
करो उस निष्कम्प
दीप शिखा का ध्यान,

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

पार करो प्रतिध्वनि की यह मरीचिका !
बंद हो जायगा कोलाहल—
ज्योति का होगा आविर्भाव
खुलेंगे आतम के दुआर !

वहाँ
खुले गगन के नीचे
धूम्र-वर्णं
षोडशदल कमल का वन
पूर्ण चन्द्रकार
शुभ्र शून्य में विराजमान
शिवशंकर
पंचवक्त्र
चरण में जिनके
झूमते गजराज
इन जनः लोक में वाणी मौन
बन्द होंगे कान
शब्द निःशब्द होंगे
काल के टूटेंगे आयाम।

किन्तु
पराम्बा,
भगवती, शारदा, सरस्वती !
मारुता,
कामेश्वरी, चन्द्रामृत का पान कर,
प्रणव का ध्यान कर,
प्रविष्ठ हो
पग धरो
द्विदल कमल प्रदेश में
अर्धनारीश्वर के देश में !

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

अतृप्त चैतन्य को अर्पित कर तेज की छाक
उतार कर परिधान सुन्दरी
देह को गगन रूप दो
खेचर बनो
इतरलिंग के दर्शन कर
महतत्त्व को जान
तपः लोक में
श्रवण करो,
अनवरत गूँजता प्रणव का वह गान !

मन्त्र-मयी,
परमेश्वरी
अम्बिके, सुरेश्वरी,
सावित्री,
विकल न हो बस पास है
हिम का अरण्य
धवल धाम कैलाश
जहाँ खिला सहस्रदल कमल एक
श्वास जहाँ समाप्त है
सुधा सिंधु में मणिद्वीप पर, देखो विराजमान,
चिदानन्द रूप
परम शिव–भूतभावन भगवान,
वरण अनुकूल
नीलकंठ
नटराज ।

नश्वर पंचतत्व त्याग
कर अग्नि स्नान
ओ स्वर्णमयी,
अमृता, शक्तिरूपा

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

लो परिणय बेला आ गयी
आ गया वह शुभ लग्न
आ गयी शुभ घड़ी
धन्य धन्य वह शुभयोग
शिवशक्ति संयोग का
लय योग का
लय अमृत-अद्वैत का
वह महामुहूर्त आ गया !
त्याग कर संकोच लाज
विशालाक्षी, विश्वकारिणी
वरण कर अनाथनाथ का
प्रभु विश्वनाथ का, समा जा प्राण वल्लभ में, शैलसुते
अंक में प्राणनाथ के,
चंद्रमौलीश्वर भूतनाथ के,
पतिव्रता पहनाओ वरमाल
स्वप्न साकार हुए
पहनाओ जयमाल
दुलहिन गावो मंगलाचार
घर आये भरतार
देखो—अपूर्व आनन्द घन बरसते
उलीचते मधुमान सिंधु, रस अथोर बरसते,
साकेत में आज
उत्सव अनिर्वाच्य
महासुख भरा
उमा महेश्वर के
पावन परिणय का
मिलन महारास ।

नमन करो
प्रणिपात हो

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

जन्म सुफल करो
दर्शन करो
सुर विटप परिवृते
विंशति सहस्रदल कमल मंच पर
आसीन शोभाधाम
कनक प्रभामय
पार्वती-परमेश्वर का !
श्रवण करो
गूँजती दिग्-दिगन्त में—
चिदानन्द लहरी
आतम का मंगलगान !
मनन करो–असीम सुख
ब्रह्मानंदलीन–प्रणवहंस का
ॐ शाँति शाँति शाँति ॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

अनोखी शादी

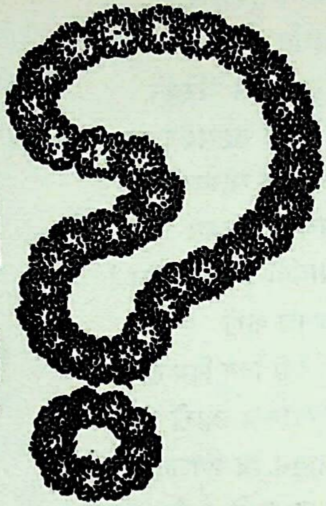

अजब तमाशा है
ये शादी है या बरबादी है
दुल्हा दुलहिन के बीच
फासला सिर्फ एक हाथ का
मगर दूरी काले कोस की
बीच में
सात ताले
सात परदे
भीषण दलदल
बीहड़ कमलवन
उन्मत्त गजदल
हिंस्र व्यालगन
नामुमकिन है मिलना
कड़े से कड़ा पहरा।

अजब तमाशा है
इधर हरदम सोती रहती—दुलहिन !
उधर दूल्हा समाधि लगाये बैठा

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

अपने फक्कड़पन में खोया !
न इन्हें गरज
न उन्हें चिन्ता,
कैसे होगी शादी
कैसे बसेगा संसार
इनका घर-बार !
न इनके कोई माईबाप
न उनके कोई कुलजाति !
फिर भी कहते हैं—
दूल्हा दुनियाँ का बाप
दुलहिन संसार की माई
तब कौन करेगा इनकी सगाई
कैसे होगी इनकी शादी भाई ?

अजब तमाशा है।
कहते हैं—
दुलहिन को निकलेगी बारात !
दूल्हा अपने घर खायेगा भात !
दुलहिन अकेली—
दूल्हा एकाकी !
इनका देस विराना—
उनका घर मसान !
कहो कैसे मिलेंगे भरतार ?
कैसे होगी शादी
ऐसे लड़के की
ऐसी लड़की की ?

अगर चली भी दुलहिनियाँ
पियु के देश—
तो मारग में उत्पात,

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

हर पड़ाव पर बंधन
हर मोड़ पर लालच के अम्बार
हर गली में बैठे, ठग और लुटेरे
चतुर्दिक फैले, भ्रमजाल
भूल-भुलैया में आन फँसाते
अनहद के नाद
साँसत के पाश !
और कहीं भूले-भटके
आ पहुँची पियु की नगरिया
'तो दुलह घर में नहीं
दुलहिन भाँवरी फिरे
अजब अचरज्ज का खेल' (कबीर)
कौन बूझे--कौन समझे ?
मगर आज आया है निमंत्रण
परिणय का—
दुलारी दुलही
और न्यारे दुल्लह की शादी का !
मगर कौन जाये भाई—
शादी-वादी में
बड़ा षट्करम है
रोता जानता जो मरम है !
अच्छा है
घर बैठो—गंगा नहाओ—
बाबा के दरसन करो
चना चबैनी खाओ !
संतोष करो—
सोओजी टाँग पसार—
क्यो ढोवोगे भारी बोझा
क्यों फोड़ोगे कपार ?

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

अरे भाई, माई है
कभी तो खबर लेगी—
हो जाने दो शादी,
कभी तो बाबा को
इस भूत की अरजी देगी—
'रखलो इसको अपने दरबार
ओ मेरे औघड़ सरकार' !
'माई की जयजयकार,
बनी रहे जोड़ी सरकार' !
तब तक बैठो
गाओ बम लहरी
नाव पुरानी–नदिया गहरी
बम-बम-बबम-बबम बम
बम-बम लहरी-बम लहरी।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

ये तन मेरा जैसे एक सितार है
ये मस्तक इसका तुम्बा है
और मेरुदण्ड इसकी डाँड है
जिसपर षट्चक्रों की बँधी सुंदरियाँ
और कसे
ईडा पिंगला सुष्मना के मुखर तार हैं!
कण्ठ जवारी सुरीली बैठी
और कहीं तारों के नीचे—
कुहु, वरणा, पूसा, सरस्वती
अलम्बुषा, पयस्विनी, गांधारी
नाड़ियों की गुंजरित तरबें!
डाँड छोर पर बँधी कुण्डलिनी की खूँटी
जो अभिनव, सर्पिल, अद्भुत आधार है
कभी तारों को कसती, कभी ढीलती।
यहाँ हर पल हृदय के चौताल पर
चलता साँसों का आरोह-अवरोह
बजता रहता जीवन राग उदार है
गगन मंडल पर बैठा कोई
करहीन बजावन-हार

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

बजाता है यह अजब सितार
अनहद नाद जगाता, शिव शिव गाता !
गगन मण्डल में स्वर बिखरते
धरती के प्राणी कभी न सुन पाते
निरंतर बजता रहता—
ये तन मेरा जैसे एक सितार है !

फिर जब वह तुम्बा धरती पर रख देता
और अलबेला वादक चल देता—

तब मौन तार से उभरता एक कबीर—
'कबिरा जंत्र न बाजई, टूट गये सब तार
जंत्र विचारा क्या करे चले बजावनहार !'

•

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

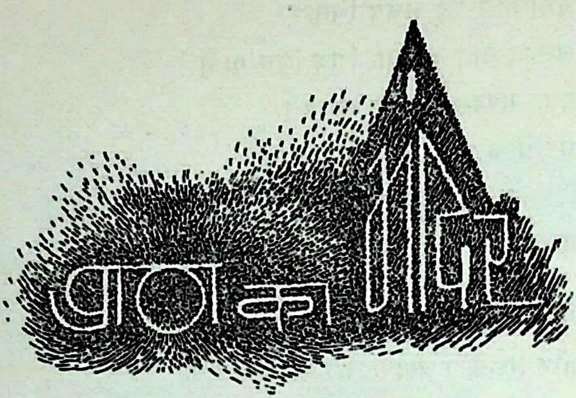

तन के नगर में
प्राण का मन्दिर कहाँ है ?
युगों से आदमी भला
उसे खोजता रहा है
वो दिल में है ?
जिगर में है ?
दिमाग में है ?
या कि समूचे ही तन में है ?
प्राण का मन्दिर कहाँ है ?
यह तन—
कोषों की बस्ती,
तन्तु तन्तु में—
प्राणों की वंशी सुन पड़ती;
गोपी सा मन ढूँढा करता
प्राण गोपाल का भवन कहाँ है ?
दो प्राणों के नन्हें कण,
कहीं किसी गली अंधेरी में
जा टकराये—
मिले
एक हुए

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

महा प्राण बने
एककोष परमशक्तिमान बने,
जगन्नियन्ता से—
परम ज्योतिमान बने,
प्रलय अम्बु में बाल मुकुन्द सा
सृजन कल्पना में डूबा,
कोष सचेत हुआ, जागा
एक था, अनेक हुआ
शक्तिमान कोषों का लो पुंज बना !
हर कोष—ज्योतिवान
हर कोष—अति प्राण
फिर सब अलग अलग राह चले
सबने अपने नाना-विध परिवार रचे
कोषों की बसी बस्तियाँ
हर बस्ती के अलग मुखौटे
हर कोष प्राणवान,
हर कोष में नन्हें प्राण,
हर प्राण परम शक्तिमान,
हर प्राण में तन का बीज वर्तमान।
तन नगरी में—
कोषों की बस्ती
हर बस्ती में प्राणों की सेना
हर सैनिक बलवान
हर सैनिक महा-प्राण !

यह गोरख-धन्धा भारी
ढूंढ ढूंढ गोपी हैं हारी
क्योंकि—छलिया गोपाल ही वृन्दावन
तब कहाँ मिलेगा उसका

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

भवन ?
अतएव
प्राण की शोध मत करो !
वह अपने जनक ब्रह्म सा
सर्व व्यापी-अनाम-अरूप है।
प्रकाश है—
जिसमें सबकुछ दिखता
किन्तु
जो स्वयं अदृष्ट है।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

विश्व के एक चौराहे से

मैं
यहाँ हूँ।
विश्व के विशाल चौराहे पर !
यहाँ
जहाँ से धरती का सूर्य—
टिमटिमाते सितारे सा
कहीं दूर
तारकों की भीड़ में खो गया है !
नहीं—
यहाँ सूर्य चन्द्र कुछ नहीं है।
सिर्फ
अनगिनत तारे सितारे हैं
झिलमिलाते जुगनुओं से
घन-तिमिर में
किसी सघन-वन के
या
बहुत दूर पर
किसी आधुनिक नगर की
रोशनियाँ
जगमगाती हों जैसे !

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

हाँ
मैं यहाँ हूँ
जहाँ से
सौर पथ पर चल रही
ग्रह-रथों की दौड़
दृष्टि से ओझल
कल्पना की बात है
कई प्रकाशवर्ष दूर
बिखरी
निहारिकाओं से घिरा
सतत्
अकेला
मैं यहाँ हूँ !
जहाँ
समय रुक गया है ?
तिमिर-सा सब ओर भर गया है।
किन्तु,
यह स्वम्भू अंधेरा
भिन्न जो बहुत है
धरती के तम से
काली निशा का
तम चूर्ण यह नहीं—
न दिवा प्रकाश की
यह काली छाया,
यह
तम सत्य है।
जो
भरता निखिल ब्रह्म विस्तार
श्याम सलोना पुरुष विराट
उन्हीं चरणों में प्रणिपात
मैं यहाँ हूँ !

देख रहा हूँ
नभ गंगा की पतली धार

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

और उसमें
तैरते कुछ आलोक पुंज
दीपदान से
अग्नि के ये गोले
सूर्य जो कहलाते—
अमित अंधेरी रात में
जैसे किसी सघन विजन के
छोर पर
दीप दो चार
टिमटिमाते
हाँ, मैं यहाँ हूँ !
दूर सबसे, पास सबके,
अन्तर के अंधेरे में
आलोकित जो
तमसः परस्तात
आदित्य वर्ण पुरुष महान् के
अलौकिक प्रकाश से ।
यहाँ
न दिन है, न रात
न सत्, असत्, अज्ञात, विज्ञात
हैं
केवल कल्याणमय
शिव,
अविनाशी
तत्सवितुर्वरेण्यम्
और
अतम है ।

●

७

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

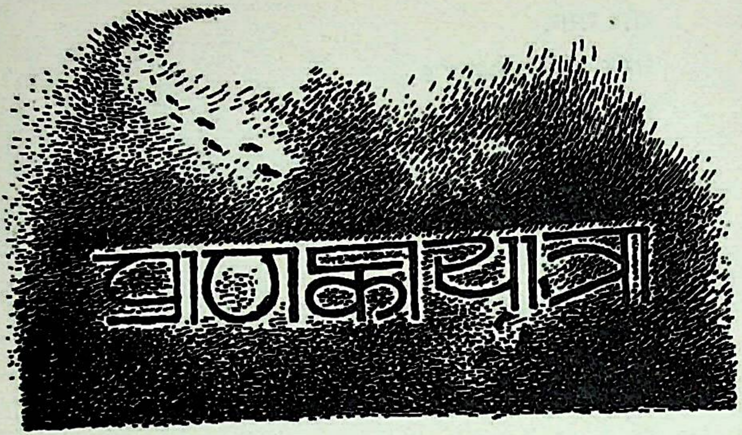

जन्म—
आगमन ।
जीवन—
पड़ाव ।
मरण—
प्रस्थान ।
जग—
एक सराय
जहाँ ठहरते
ब्रह्मपथ के यात्री—
आत्मनाम प्राण,
बिछुड़े जो
महाप्राण से
अकुलाये विरही
भागे फिरते—
ब्रह्माण्ड में
पिंजड़े में फँसे चूहों से
व्याकुल,
पथभ्रान्त,
आज यहाँ, कल वहाँ,
इस सराय से उस सराय
लक्ष्यहीन,
दिग्विहीन,
और नट-नागर छुप-छुप
मुस्कराता रहता ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

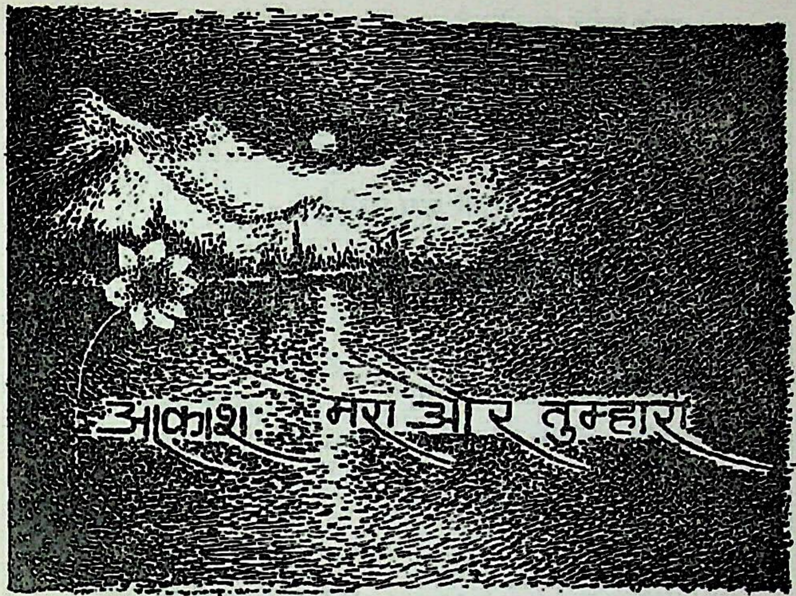

मैं और मेरा आकाश तुम्हारे आकाश के नीचे है
मगर तुम मेरे आकाश के नीचे नहीं हो
मैं बराबर भींजता रहा हूँ तुम्हारी बरसात में
मगर तुम मेरी बरसात में, कभी भींजे नहीं हो !
क्योंकि—
मेरा और तुम्हारा आकाश अलग है !
तुम्हारे नीलाकाश में
रुपहला चाँद हैं—सितारे हैं
चमकता है ताप बरसाता
सुनहला वह आग का गोला
जिसे तुम कहते हो सूरज !
तुम्हारे नीलाकाश में—
बादल हैं जो सभी सैय्यारों को ढँक लेते हैं,
बहुत गरजते हैं, कभी बरस लेते हैं ।
तुम्हारा यह नीलाकाश

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

उल्टे कटोरे सा गोल है
दूर हर पेड़ों के पीछे
जो धरती से जा मिलता है;
वहीं कहीं से
शाम सबेरे लाल फुहारे छूटा करते हैं
रवि शशि डूबा उगा करते हैं !
तुम्हारा यह नीलाकाश
सदा रंग बदलता रहता है,
इन्द्र धनुषों से खेला करता,
जाने कितने ही कौतुक करता रहता है

किन्तु मेरा आकाश
क्षितिजविहीन,
धूमिल और धूसर वर्ण है !
यहाँ नहीं है
सूरज चाँद सितारे,
बादल बिजली और सैय्यारे,
रंगों के वे इन्द्रधनुष,
यह दिन रात विहीन
यह धूप-छाँव हीन
गगन है—
धूमिल और धूसर वर्ण है !
यहाँ—
केवल स्मृतियों की बिजली कौंधा करती,
घटा विचारों की घिरती रहती,
लक्ष्यहीन इसकी धरती घूमा करती,
खारे आँसुवों से भींगा इसका आँगन है
मेरा यह आकाश
धूमिल और धूसर वर्ण है !

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

. CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

तुम्हारे आकाश के नीचे
हरी भरी धरती है
ऊँचे पर्वत हैं
नदियाँ हैं, निर्झर हैं
अनेक वन, उपवन हैं
और जाने कितने गुलजार नगर हैं !
तुम्हारे आकाश के नीचे
नीला सागर लहराया करता है
पवन झकोरे खाया करता है !
तुम्हारे आकाश के नीचे
हिम अरण्य हैं
ऊसर मरुथल हैं !
नित नये रूप बदलती
ऋतुओं के परिधान पहनती
वह प्रकृति नटी सुघड़ है !
पर मेरा आकाश—
इस रंगीनी से बहुत दूर
धूमिल और धूसर वर्ण है
इसके नीचे केवल एक निर्जल मानसर हैं
जिसमें खिला सहस्रदल एक श्वेत कमल है
जिसकी हर पंखुड़ी अलौकिक
अपनी पहुँच के बाहर है।
मेरे आकाश के नीचे
निबिड़ अंधेरे में
उस बड़ी झील के तट पर
हँसा बिलख बिलख कर रोता है,
आँसू से गीले पथ धोता है,
मेरे आकाश के नीचे

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

एक न प्राणी है
जो पथ बतलाये,
एक न तरणी है
जो कमल नाल तक पहुँचाये,
यहाँ बात बहुत होती है
पर चहुँदिक नीरव सन्नाटा है,
यहाँ घात बहुत होती है
पर हमलावर कोई नजर न आता है !
कहते हैं—
इस विचित्र कमल के ऊपर
कोई एक योगी बैठा है
जो हरदम अनहद-बीन बजाता है
'शिव-शिव', 'शिव-शिव' गाता है,
आनन्द वहाँ अनवरत बरसा करता है
विमल ज्ञान प्रकाश छिटका रहता है !
कहते हैं—
उसी कमल पर
एक मधुमान सिंधु है
जिसमें अवस्थित एक मणिद्वीप है
वहाँ हृदयशिला पर
ज्योति का एक मंदिर है
जिसके द्वार मूँदे रहते हैं !
यह मेरा आकाश
धूमिल और धूसर वर्ण है !
कमल दल पर पहुँचना—
सागर तट तक जाना—
फिर तैर कर मणिद्वीप पर लगना—
और—
मंदिर के द्वार खोलकर

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

अपना आकाश
ज्योतित करना
बड़ी दूर की बात है !
अभी तो
हारा थका हँसा है
टूटी उसकी पाँखें हैं
धूमिल सारा पथ है—
धूसर उसकी आँखें हैं !
यह मेरा एक वित्ते का आकाश
तुम्हारे विशाल आकाश से
बहुत भिन्न है—
धूमिल और धूसर वर्ण है।

कभी आओ, देखो तो
समझोगे
तारक विहीन अंधे ये आकाश
तुम्हारे नीलाकाश से
कितने भिन्न हैं !
फिर भी हर तन के
अंग अविछिन्न हैं !
इसी से कहता हूँ—
मेरा और तुम्हारा आकाश
अलग है।

•

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

मयखाना

अजब ये मयखाना
न कोई साकी, न कोई पैमाना,
अकेले आना, अकेले जाना,
खुद ही जाम उठाना
खुद ही पी जाना,
खुद को भुला कर
खुदी को भूल जाना।
मय में डूबना
'मैं' से छूट जाना।
जीना मरना, मरना—जी जाना
सुरा पुरानी, नयी सुराही
चाहो तो प्याला उल्टा कर पी जाना।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

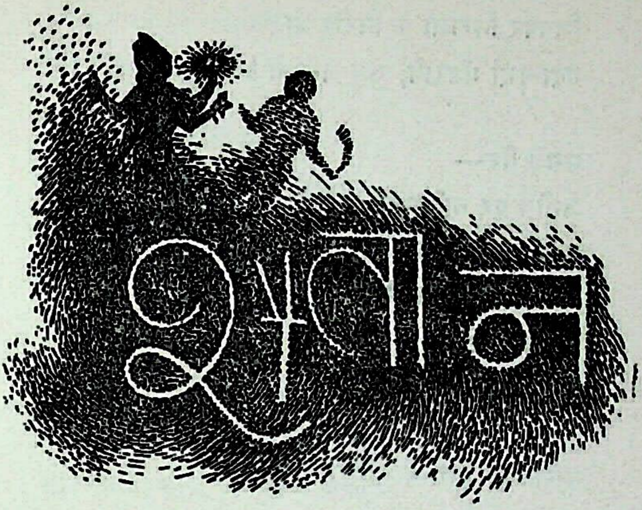

कल मैंने शैतान से मुलाकात की

वह अपने सींग हिला हिला कर
जोर से अट्टहास करता था
और हँसी के दौरे से
उसके हाथों के मदिरा-चषक से
धरती पर मासूमों के रक्त सी—
वारुणी छलक-छलक कर गिर रही थी

उसका चेहरा—
केलिडोस्कोप में बदलते पैटर्नों सा
हर क्षण बदलता जा रहा था—
कभी असीम सौन्दर्य सा दीप्तमान
कभी कठोर काली चट्टान सा कुरूप
कभी इंसानी, कभी हैवानी !

उसकी आँखें—
नीले आकाश सी गहरी और निर्मम
अनुभूति-हीन थीं

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

जिनपर निराशा के निरीह बादल
यदा-कदा मँडराते, उड़ जाते थे !

उसके पैर—
जमीन पर नहीं पड़ते थे
मगर वह उड़ नहीं रहा था
शायद उसके पैर थे ही नहीं
या कि थे ?
कुछ समझ नहीं सका !

उसके एक हाथ में मदिरा पात्र था
और दूसरे में रस्सी का फन्दा था
और हाथ भी शायद थे।
क्योंकि कई बार वह हाथ से इशारे करता था,
पास बुलाता था, धमकाता था
चेष्टा करता था पकड़कर गला घोंट देने की
या प्यार से पीठ थपथपाने की—!

उसके वस्त्र
कोहरे में रंगे
हवा से लहराते थे—
हर पल नये रूप धरते
बन्धनहीन, अनसिले
बिना किसी ताना-बाना के बुने थे !
वह हसीन-शक्ल आदमी
कभी खूबसूरत नागिन सा लगता था
कभी खूंखार भेड़िये सा—
ऐसा प्रतीत होता था कि मोहिनी—उर्वशी
महिषासुर का वेष धर कर आयी है !

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

मैंने सहमते हुए उससे पूछा
'जी क्या आप ही शैतान हैं ?'

किसी गहरे कुएँ में डूबे
जैसे किसी प्रेत ने उत्तर दिया—
'हाँ मैं ही शैतान हूँ
तुम्हारे खुदा से एक जमाने से लड़ रहा हूँ।'

'मगर तुम्हारा घर कहाँ है ?
तुम्हारे राज की सीमा कहाँ है ?
क्योंकि मैं कभी खुदा के राज से
बाहर गया नहीं, जा भी न सका।
और उसके बाहर भी क्या कुछ है
कम से कम हममें से तो कोई बतला न सका।'

'मेरा घर यहीं है,
मेरा राज भी यहीं है,
मैं अपने दुश्मन के पास
एक समानान्तर जगत में वास करता हूँ
स्टालिनग्राड के युद्ध सा
चप्पे-चप्पे में हमारा युद्ध चलता है।'
'मगर मियां शैतान,
खुदा तो कण-कण वासी है
हर अणु-परमाणु में व्याप्त है
हर दिल, हर साँस पर उसी का तो राज है।'

'ये तुम कहते हो।
मगर तुमने गौर से देखा नहीं है
तुम एक के फन्दे में फँसे हो
द्वैत के यथार्थ से क्यों परे हो ?

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

जहाँ ऋण है, वहीं धन है।
आँख खोलकर देखो प्यारे
परमाणु के अन्दर भी हम लड़ रहे हैं—
तुम जिसे विपरीत गुण कहते हो
वो दरअसल हमारी ही मार-काट है!
वो नर है, तो मैं नारी हूँ
वो गर्म है, तो मैं हिम शीत हूँ,
वो रोशन है, तो मैं 'हेड्स' का अंधेरा हूँ,
वो आकाश है, तो मैं पाताल हूँ;
हर मन में, हर तन में
कण कण में—
न जाने कब से
हम लड़ रहे हैं
और अभी बहुत दिन तक लड़ेंगे।'

'अगर खुदा हारा तो—
दुनिया पर तुम राज करोगे ?
कहते हैं खूब करोगे शैतानी
सब कुछ बरबाद करोगे।'

'अगर खुदा हारा—
अगर खुदा हारा—'
बहुत जोर से वह हँसा
गरज-से गूँजा, काँपा आसमान—

'तुम्हारे कुतर्क ही तो तुम्हें ले डूबे हैं
अगर खुदा हारा तो कयामत आ जायेगी—'

'और तुम हारे तो ?'

'तब भी दुनिया डूब जायेगी'
अचानक उसकी आवाज बहुत कोमल हो गयी

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

मीठी बनी कि जैसे उसमें मिसरी घुल गयी
कहा—

'तुम समझे ही नहीं
यह संसार अजब संयोग है
दो विपरीत का योग है
शत्रु न हो तो मित्र कैसे ?
हमेशा दिन रहता तो—
क्या उसको तुम दिन कहते ?
तुम तस्वीर का एक रुख ही देखते हो
आओ मेरी प्रदक्षिणा करो
और कई रुखों से मुझे देखो।'

मैं चकित सा शैतान की बात सुनता रहा—
फिर उठा
बहुत रोका मित्रों ने
शैतान की फेरी न करो !
मगर मुझे भी जिद हो गयी थी
कि मैं शैतान की पीठ देखूंगा
तस्वीर का दूसरा रुख भी देखूंगा,
और मैं उठा—
घूम कर शायद उसके पीछे गया !
मगर ऐसा लगा—
जैसे अंधेरे से सहसा निकल कर
रोशनी में आ गया हूं।
आँखें चौंधिया गयीं
बुद्धि चकरा गयी—
ये क्या हुआ
मैं खुद 'खुदा' के सामने खड़ा था
खुदा—

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

जो बड़ी लम्बी श्वेत दाढ़ी का बुजुर्ग था
एक हसीं सूरत नौजवां था
नन्हा-मुन्ना बाल गोपाल था
हजार सूरत, मधुर मूरत
वो अमूरत शब्द से परे था !
शंका के बादल घुमड़े
कहा—
'नहीं तुम खुदा नहीं हो
शैतान हो
खुदा का रूप धर कर आये हो'
मोह का अन्धकार चीर कर
आकाश से बोली वह वाणी
—'यों क्यों नहीं सोचते
कि मैं ही शैतान बनकर तुम्हें बहला रहा था
तुम्हारी अपनी सूरत के खराब पहलू दिखला रहा था।'
रात सहसा बीत गयी
सुबह का सूरज ऊगा—
ज्ञान का सागर लहराया
'यही सच है, यही सच है।'
फिर उमड़े आँसू
छलिया पर प्यार भरा क्रोध उमड़ा
कहा—
'ओ मेरे खुदा
तुम बड़े शैतान हो
जाओ मैं तुमसे नहीं बोलता।'

और सुना तुमने ?
साँझ के झाँवर सा
वह सचमुच चला गया—
मेरा खुदा रूठ कर मुझसे
सचमुच चला गया !!

•

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

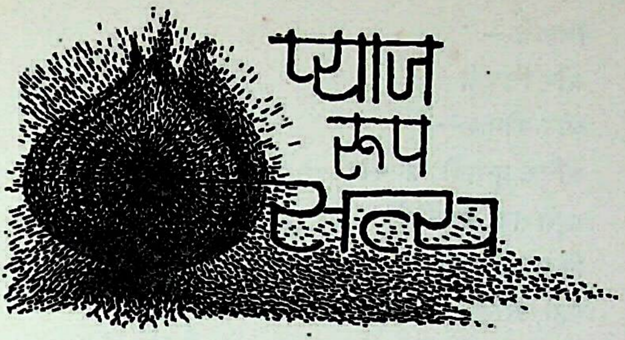

प्याज रूप सत्य

सत्य क्या है ?
कि जैसे एक प्याज है
इक परत उतरती
नयी स्निग्ध चमकीली
परत निकलती
तेज गमक उठती—
आँख में आते आँसू
हाँ
यही है।
यही है ॥
वो सत्य जिसे हम ढूँढते थे ।
फिर
तत्त्व बोध होता—
अरे, यह तो छिलका है।
सत्य का आवरण है।
इसे उठाओ
इसे हटाओ
तब दर्शन होंगे
सत्यनारायण के
उनके धवल धाम के।

फिर नयी परत निकलती

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

चिकनी—
और चिकनी
और कोमल—
अधिक गुलाबी, चमकीली—
बहुत तेज, गमकीली
फिर वही भाव
वही उत्तेजन—
मिल गया !
मिल गया !!
फिर वही तत्त्वबोध
यह तो छिलका है
और गहरे उतरो,
गहन और गहरे उतरो !

कुछ थक कर
ऊब जाते
किसी एक परत पर रुक जाते
प्याज की गोली सा बचा
सत्य हजम कर जाते !

कुछ बिरले
हठी हठीले
आगे बढ़ते ही जाते
हर परत
सत्य के पड़ाव
पथ के ठहराव
तनिक न रुकते
चलते ही जाते
यह तो गुरु आदेश
"चरैवेति"—"चरैवेति"

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

और
जब
अन्तिम पर्दा उठता—
अन्तिम छिलका हटता—
वे चुप हो जाते
मित्र, शिष्य हमें बतलाते—
इन्हें तत्त्व ज्ञान हो गया है
इन्हें चिरन्तन सत्य मिल गया है,
पर सत्य क्या है ?
नहीं बतलाते
"अजी वह शब्द से परे है,
वर्णनातीत है,
गूँगे का गुड़ है,
क्या बतलाये,
कैसे समझायें ?
मगर
जिसने प्याज छीला है—
उठाई है अन्तिम कोमल परत भी—
वह जानता है—
उसके बाद कुछ नहीं होता—
इसी से तो तत्त्वज्ञानी मौन हैं
क्योंकि सत्य कुछ नहीं होता !
सत्य तो—
समूचा पथ था,
राह की धूल का हर कण था
अनुभव का हर क्षण था,
वह सत्य का पथ
जिसे रौंदते चलते हैं सब पैरों तले—
अजाने सत्य के स्वर्ण-भवन की शोध में
यह भूल कर—
कि
प्याज सा सत्य,
पूरी गाँठ है
उसकी परतें नहीं
उसके छिलके नहीं ।

•

८

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

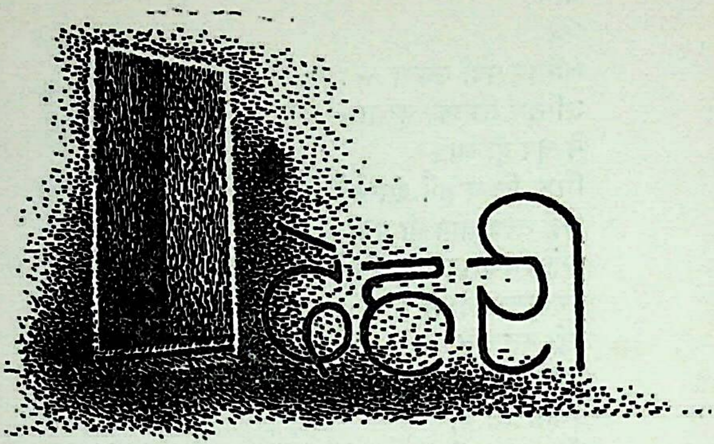

देहरी

मैं तुम्हारी देहरी तक आया !
बहुत पुकारा
बहुत गुहार की
साँकल खटखटाई
किन्तु
द्वार खुल न पाया !

अब मैं क्या करूँ ?
क्या तुमने इसीलिए
इतनी दूर से—इतना समय नष्ट कर
यहाँ बुलाया था ?
क्या तुम्हारे द्वार पर आनेवालों का—
होता है ऐसा ही स्वागत ?
और फिर अब लौटकर कहाँ जाऊँ ?

द्वार खोलो—
द्वार खोलो—
नहीं तो यहीं
देहरी पर सर पटक पटक कर
मैं प्राण दे दूंगा
और इसका पाप तुम पर होगा !

•

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

ये कैसी देहरी
यह कैसा द्वार है ?

देहरी—
जो किसी के लिए पर्वत हो जाती है
और
किसी के लिए राजपथ सी प्रशस्त बन जाती है !

द्वार—
जो खुले होने पर भी मुंदे से लगते हैं,
और
जो मुंदे रहने पर भी लोगों को आने-जाने देते हैं !

मैं क्या करूँ कैसे अन्दर जाऊँ ?
देखो, वह एक सज्जन—
पोथियों का सोपान बनाकर
देहरी लाँघ गये—
एक महानुभाव उड़ते हुए
द्वार से अन्दर गये—
एक महान की सवारी
विमान पर विराजमान

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

बड़ी शोभा से, धूम-धाम से
लोगों के कंधों पर भीतर गयी—
कुछ खड़े देखते रहे।
बहुत हैरान हूँ
ये कौन हैं जो अन्दर चले गये ?
कौन हैं जो द्वार से ही लौट आये ?
द्वार पर बैठी पगली—
आनन्दमयी इस बूढ़ी से पूछूँ
'माँ, तुम कब से बैठी हो ?
क्या बतला सकती हो
अन्दर जाने का उपाय ?'

—'भोले बेटे, आ बैठ यहाँ
दरवाजे से ही घबराया है—
कौन है तू और कहाँ से आया है।'

—'बहुत दूर से चलकर आया हूँ माँ
उसके आमंत्रण पर ही आया हूँ माँ,
पर द्वार न ये खुलता है, माँ
न पुकार ही कोई सुनता है माँ
माँ, बोल मैं क्या करूँ ? बोल मैं क्या करूँ ?'

वह बोली—
—'तो क्या अन्दर जाना चाहता है ?'
—'नहीं माँ—किन्तु ये कौन हैं जो जा रहे हैं ?'
—'ये पोथी की सीढ़ी से अन्दर जानेवाले
बड़े बड़े विज्ञानी, विद्वान महान् !
ये उड़नशील पोत, योगिराज महान्
ये जो धूमधाम से जाते हैं
ये सब भक्तराज कहलाते हैं।'

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

—'अरे तू भी दान पुण्य
ज्ञान ध्यान की—
जप-तप पूजा सेवा महान की
कोई पूंजी लाया है—
क्या प्रवेश शुल्क दे पायेगा
या बस यों ही फोकट अन्दर जायेगा ?'

—'माँ मैं अबोध, निरगुनिया
खाली हाथ ही दौड़ा आया—
पास न पूंजी-विद्या बुद्धि की,
न जप तप पूजा का ज्ञान
द्वार तक चला आया हूँ मैं अनजान',

—'अच्छा किया जो आया बेटा—
बात भेद की बतलाती हूँ
सुन, यह एक द्वार नहीं—
ऐसे तो नव द्वार हैं
और ये अन्दर जाने वाले
इनमें कोई एक डाकेगा—कोई दो पार कर पायेगा !
आठ चक्करों को काट कर नव द्वार
कोई विरला ही लाँघ पायेगा !
इसलिए हठ छोड़ दे और घर लौट जा—
सोच तो—
नौ दुर्गम देहरिया लाँघने पर—
अवधपुरी मिलेगी
वहाँ भी सात आवरण के पीछे—
किसी मणिद्वीप पर
बिन्दु सा अलखित विराजता वह
ऐसे को देखकर क्या करेगा ?

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

केवल उसके नाम का वितण्डा है
माया है-छल है-धोखा है'

—'नहीं माँ, बिना मिले तो मैं कदापि न जाऊँगा
उसके बुलावे पर द्वार तक आ गया हूँ—
अब आगे उसे स्वयं आना होगा
अन्दर भी उसे स्वयं ही ले जाना होगा।'
—'तू जिद्दी है—वह कभी न आयेगा
युग-युग बैठा तू राह तकेगा, पछतायेगा ?'
—'नहीं माँ, नहीं–ऐसा कदापि न हो सकता
उसको आना ही होगा—
पर, तुम कौन हो—तुम कौन हो माँ
जो राह रोक कर बैठी हो ?'

'अरे मुझे नहीं पहचानता ?
मैं ही तो नियति नटी हूँ
महामाया, उसी राम-रम्मैया की दुलहिन हूँ—
देख ना वह मेरे ही पीछे तो लुक-छिप कर बैठा है
और लोग उसे कहाँ-कहाँ ढूँढते फिरते हैं।'

और फिर—
बिखरी उसकी हँसी, प्रभात की अरुणाई-सी—
लुप्त हो गयी बुढ़िया
लुप्त हो गयी देहरी
लुप्त हो गया द्वार—
रह गया चहुँदिशि व्याप्त
ज्योतिर्मय एक अंधकार !

•

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

प्रश्न

शब्द क्या जरूरी है
तुम्हें बुलाने को ?
प्रार्थना क्या जरूरी है
तुम्हें रिझाने को ?

पुण्यसलिल के बदले
क्या आँसुओं से काम नहीं चलेगा ?
भावना का यह पट
क्या दिव्य अम्बर नहीं बनेगा ?

तुम्हारी पूजा अर्चना
क्या षोड्शोपचार ही से हो सकेगी ?
बिना भोग के
भगवान् का क्या दिल नहीं हिलेगा ?

तुम्हारी कल्पना, तुम्हारी याद,
जगाती है एक सिहरन
आर्त यह स्वर, अन्तर का
तुम्हारी मन वीणा की झंकार—

क्या जगा न सकेगा ?
मौन मैं हूँ

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

और तुम शब्दहीन

मैं थका बहुत हूँ
और तुम आ न सकोगे, ओ पगहीन !
हठ मेरा—
हठ तेरा—
कहाँ ले जायेगा मुझे ?
कहाँ ले जायेगा तुझे ?

कौन उत्तर देगा इन प्रश्नों का ?
और कौन उत्तर लेकर जायेगा ?
अरे ओ, ए—
इस विद्रोही को समझाने

कोई ऊधो भेजो न।
मौका हो तो खुद ही आ जाओ !

•

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

उत्तर

प्रश्न मत करो।
प्रश्न उलझाते हैं
उत्तर नये प्रश्न उठाते हैं।
वह कौन है ? कैसा है ?
कहाँ है ? कब से है ? क्यों है ?
किसी भी प्रश्न का समाधान
आजतक हो न पाया है—
सुना है—
चुपचाप शरणागत हुआ जो
वही कुछ जान पाया—
बाकी तो ज्ञान की गर्द उड़ाते रहे हैं,
धुएँ में कल्पना के चित्र बनाते रहे हैं—
प्रश्नों का सृजन करके, समाधानों में भरमाते रहे हैं,
जाना है कहाँ और किस ओर जाते ले रहे हैं।
सुनो, सरल हैं टेढ़े मेढ़े रास्ते
कठिन है सीधी राह
इसलिए प्रश्न मत करो
केवल जगाओ
मन में मिलन की चाह !

•

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

हमतुम

माना कि—
हम हम हैं
तुम तुम हो
फिर
कहाँ हम, कहाँ तुम
कहाँ तुम, कहाँ हम !
सही है कि—
हम तुम नहीं हो सकते—
तुम हम नहीं हो सकोगे !
फिर भी
आओ,
हम तुम मिलें
एक हों
औपचारिकता के नाते ही सही—
हम तुम में समायें
या
तुम हममें मिल जाओ !
हम तुम बने
तुम हम कहलाओ
हम तुम बने
तुम हम बन जाओ
हम हम का अहम टूटे
त्वं त्वं त्वं गायें ॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

'मैं' मर जाऊँ तो
'तूं' खुश होगा ?
'मैं' मिट जाऊँ तो
'तूं' बन जायेगा ?
पर 'मैं' से तुझको
इतनी नफरत क्यूं है ?
'तूं' है, सच है
पर 'तूं' ही तूं क्यूं है ?
अरे 'मैं' हूँ तो 'तूं' है
मैं न रहा तो 'तूं' कब 'तूं' है ?
कैसी यह तूं-तूं, मैं-मैं
कबतक तूं-तूं, कबतक मैं-मैं ?
चल अब झगड़ा कबतक
'मैं' को मेट-मेट कर
तूं अपनी वाली कर ले
पर
इतना बतला दे प्यारे—
कभी 'तूं'-'मैं' भी बन सकता है क्या ?

•

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

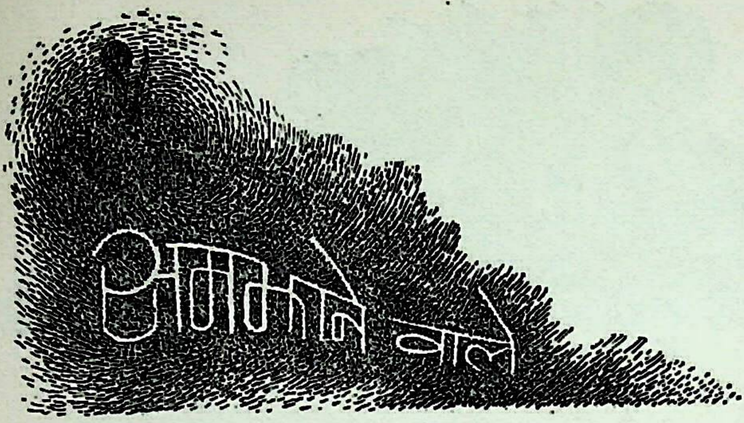

लोग एक दूसरे को समझाते हैं—
ऐसे करना होता है
ऐसे चलना होता है
ऐसे करने से वैसा होगा
वैसा करने से ऐसा होगा—
क्या अनुचित है,
क्या समुचित है,
क्या पहले करना होगा,
क्या पीछे करना होगा !
अंधों के मेले में—
अंधे रास्ता बतलाते हैं,
बहरों के सम्मेलन में—
बहरे गाना गाते हैं,
सुर के अन्तर समझाते हैं।
कबतक अपने को झुठलाना होगा—
कबतक इस मन को बहलाना होगा ?
कब वह आयेगा जो
सच्ची बात बताता है ?
कब वह आयेगा जो
समझाने वालों को समझाता है ?

•

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

किस पथ से चलूँ

तुम साथ रहो तो—
तुम्हारे घर तक क्या—
जिसके घर तक कहो चलूँगा।
तुम साथ रहो तो—
जिस पथ से कहो चलूँगा !
मुझे पथ से,
मंजिल से,
क्या लेना देना है ?
मैं तो तुम्हारा आशिक हूँ
मुझे रास्ते से,
चलने से,
क्या लेना देना है ?
तुम पास रहो तो—
…मैं चलूँ ही क्यों ?
कोई पथ चुनूँ ही क्यों ?
तुम पास रहो तो
मैं यहीं बैठा रहूँगा
बैठकर तुम्हें देखा करूँगा।

●

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

वो कैसा होगा?

शरद की चाँदनी सा उजला होगा
या भादों की अंधेरी रात-सा काला होगा ?
वह नर-रूप धारी श्याम सुन्दर होगा
या कुरूप भयकारी पशु एक भयंकर होगा ?
मातृरूपा भवतारिणी जगन्मोहिनी होगा
या काली कराली मुंडमालिनी संहारकारी होगा ?
रूप होगा–अरूप होगा–शिव होगा
दिग् अम्बर जटाजूटधारी होगा ?
या विपुल जलराशि होगा
अनभ्र आकाश होगा ?
प्रबल प्रभंजन होगा या गुरुगंभीर मेघ गर्जन होगा
अग्नि की ज्वाला सा होगा ?
सूर्य की ज्योतिर्मयी प्रभा सा होगा
साँझ के झुटपुटे में डूबा उदास सन्नाटा होगा ?
पक्षियों का कलरव या
बच्चों का कोलाहल होगा ?
वो अनुपम है, ना जाने कैसा होगा ?
बुद्धि की सीमा है, कल्पना के पंख दुर्बल हैं—
कौतूहल भरा आदमी, विराट का ध्यान
करे भी तो कैसे करे ?
पूछे भी तो किससे पूछे कि—
वो कैसा होगा ?

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

कैसे आऊँ पास तुम्हारे ?
प्रतिभा ने पथ रोके—
गुण हो गये अवगुण सारे
चतुराई ने गुमराह किया
कैसे आऊँ पास तुम्हारे ?

मैं आगे बढ़ने के धोखे में
ऊपर उठता था,
ऊर्ध्वमुखी गति को प्रगति कहता था,
बहुत चला, पर चल न सका
पटके पैर बहुत पर बढ़ न सका
अब कैसे आऊँ पास तुम्हारे ?

मैं पाप शाप बहुत ले आया हूँ,
मैं पक्के दाग लगे वस्त्रों में आया हूँ,
पतित उधारण तुम्हीं उबारो !
अब अन्धे हो गये रस्ते सारे
कैसे आऊँ पास तुम्हारे ?

हाथ बढ़ाओ मालिक
ज्ञान गर्व हरण करो—
गुण प्रतिभा सब अर्पित चरण तुम्हारे
अब तुम्हीं राह बनाओ
तब आऊँ पास तुम्हारे ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

सुबह हुई
फैला उजास
जग के कोने कोने में;
लेकिन
मन में छाया निबिड़तम !
ओ दुनिया के मालिक,
ओ नीली छतरी वाले,
यहाँ कब उजेला होगा ?
यहाँ कब सबेरा होगा ?
यहाँ भी कभी क्या कोई सूरज निकलेगा ?
या सदा रात की कारा जमी रहेगी ?
आह, रात के बाद रात—
फिर रात और काली रात !
यह अंधेर कबतक चलेगा ?
बोलो कब खुलेगा द्वार उदय का ?
कब उमगेगी एक किरन आशा की ?
कब कोई पथ आलोक मिलेगा ?
क्या अस्त न होगी यह निशा काली ?
क्या न मिलेगी अरुण प्रभात की लाली ?
इतने ढेर से प्रकाश में से
सूरजों के भारी ढेर में से—
क्या उर्मिल किरण एक भी न मिल सकेगी ?
ओ उदार ज्योतिर्मय,
यह अन्याय कब तक चलेगा ?
यह अंधा, अंधेरे में कबतक पुकारा करेगा ?

●

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

अजनबी

मैं कैसे पास तुम्हारे आता ?
मैं तुम्हें नहीं जानता—
शायद कभी मिला भी नहीं !
फिर पता तुम्हारे घर का कैसे पाता ?
मैं कैसे पास तुम्हारे आता ?

लोगों ने तुम्हारा यश-गान किया,
तुम्हारी मोहिनी मूरत का बखान किया,
मैं सीधा-सादा, अनदेखे को प्यार किया
फिर दर्शन को अकुलाया,
तुम्हें खोजता, दर-दर भटका,
पाँव थके और पथराये नयन,
टूटा यह साँसों का बाजा
मैं कैसे पास तुम्हारे आता ?

लेकिन कहते हैं तुम अन्तर्यामी हो—
घट-घटवासी, अग-जग के स्वामी हो !
तुमने तो मेरा घर देखा था,
—तुमने तो मेरा अन्तर देखा था,
फिर तुम ही क्यों न आये ?
क्यों न मुझे अपनाया ?

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

क्या द्वार तुम्हारे प्यार सदा जाता ठुकराया ?
मैं कैसे पास तुम्हारे आता ?

अपने ऊँचे आसन से उतरो
गर्व हरण करनेवाले, अपना गर्व हरो
गरीब निवाज, गरीब का मान करो
आओ स्वीकार करो, प्यार का यह नाता
मैं सदा पास तुम्हारे आता ।

●

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

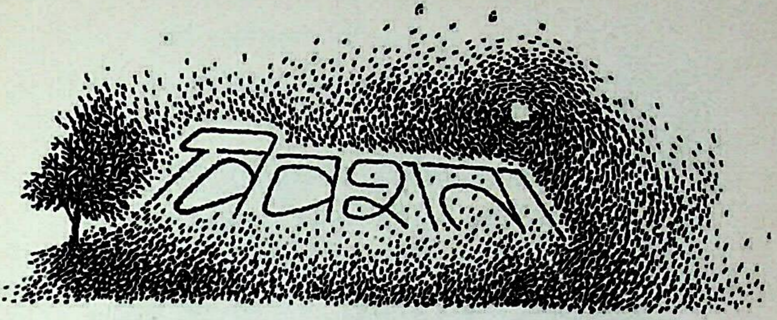

अगर हम मिल भी जाये तो क्या हो ?
मैं आदमी हूँ और तुम खुदा हो।

ये जमीं-आसमां के कुलावे मिलाने-सी बात है,
ये तेल में पानी मिलाने सा प्रयास है,
यह विरोधाभास अग्नि जल का जैसे हस्त-मिलाप है,
दरिया में मिलने को आकुल साहिल डूब जाये तो क्या हो ?

तुम अपने ऊँचे आसन से कितना नीचे उतरोगे ?
और मैं धरती का अंकुर कब तुम्हारे गगन-चरण छू
पाऊँगा ?
सागर तल पर कबतक ठहरेगी कागज की नाव ?
कमल-पत्र पर बिखरे जलकण उससे मिलना भी चाहे तो
क्या हो ?

नहीं हम तुम मिल नहीं सकते।
बबूल की डाल पर गुलाब खिल नहीं सकते।
ये नियम तुमने बनाया है वियोगी—
कुछ घटक ऐसे हैं जो कभी जुट नहीं सकते।
इसलिए—
मुझसे मिलना हो तो इंसान बनकर आओ
नहीं तो, मुझको भी अपने सा खुदा बना लो !

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

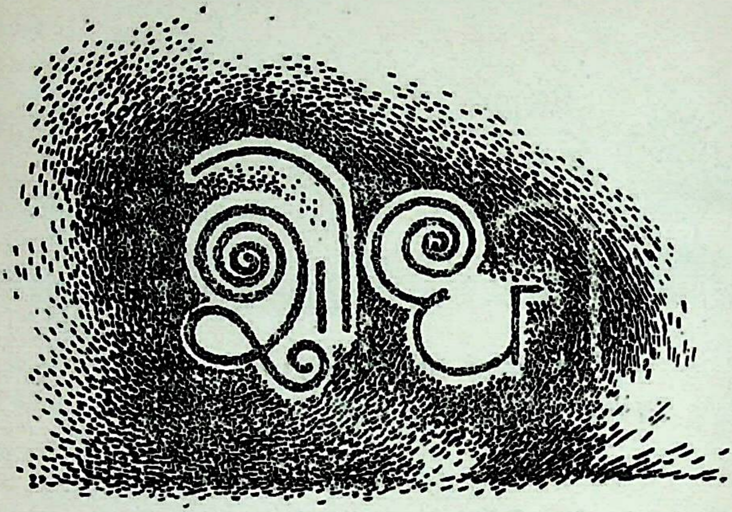

अब तुमको कहाँ ढूँढूँ ?

सर सरिता सागर देखे
नगर डगर वन उपवन देखे—
मंदिर मस्जिद गिरजे गुरुद्वारे देखे
बलख बुखारे और सभी चौबारे देखे
—मगर तुम कहीं मिले नहीं !

तन-मन के अन्दर झाँका
अंग प्रत्यंग के भीतर ताका
हृदय में—जो बदला जा सकता है—
जिगर में—जो बढ़ता घटता रहता है—
मस्तक में, मन में, जो बाहर से सुंदर, अंदर से मैला !
देखा !
रक्खा होगा—
सन्तों ने तुमको मन मन्दिर के आँगन में
ढूंढा हमने भी बहुत तुमको अपने घर में
—मगर तुम कहीं मिले नहीं !

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

कहते हैं तुम गगन-बिहारी हो
नीली छतरीवाले, गिरिधारी हो,
हम अंतरिक्ष के फेरे भी कर आये—
जा चाँद सितारों के अयन देख आये
रहस्य बहुत खुले—नूतन ज्ञान अनेक मिले—
पर ऊपर उठकर हमने देखा
वहाँ स्वर्ग नहीं है, परम धाम नहीं है
नील गगन नहीं है, दिशि या आयाम नहीं है,
ऐसे ही दूर दूर तक फैला है विश्व,
छोर-हीन, अन्तहीन
—मगर तुम कहीं मिले नहीं !

पन्ने पलटे हमने ग्रन्थों के
सुने तर्क उपदेश सभी सन्तों के,
सबने यही समझाया, बतलाया
तुम ये नहीं हो, तुम वो नहीं हो
विज्ञान असमंजस में, दर्शन उलझा घबराया,
कोई प्रमाण नहीं दे पाता कि तुम हो—
कोई 'तुम नहीं हो' यह भी न समझा पाया !
गणित गड़बड़ा गया है
तुम शून्य नहीं हो, अनन्त नहीं हो
तुमको सब कणकणवासी बतलाते हैं
किन्तु तुम अणु की नाभि नहीं हो !
पागल से जो घूमा करते—
तुम वो सूक्ष्म एलेक्ट्रान नहीं हो—
अब बतलाओ किससे पूछूँ, कबतक ढूँढूँ—
ज्ञान-विज्ञान सब हारे हैं
सच मानो हमने बाट-घाट सब निरख डाले हैं—
—मगर तुम कहीं मिले नहीं !

नाक दबायी तो दम घुटकर बोला
—वो यहाँ नहीं है !

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

पंचाग्नि तपायी तो तप कर बोली
—वो यहाँ नहीं है !
भगति भाव में डूबा साईं—बोला
—वो यहाँ नहीं हैं !
कैलाशी के हिमशृंगों ने भी कहा यही
—वो यहाँ नहीं है !
यहाँ नहीं है, वहाँ नहीं है
नहीं है, नहीं है, नहीं है !
भुवन में भर रहा बस एक नाद
नहीं है, नहीं है, नहीं है !
विश्व के कोने कोने से आता बस एक संवाद,
नहीं है, नहीं है, नहीं है ।

अब मुझको सच सच बतला दे छलिया,
तूं कहाँ कहाँ है, और कहाँ नहीं है !
कहीं 'तूं' यही 'नहीं'-'नहीं' तो 'नहीं' है ?

अरे यह कैसा भेद खुला—
यह कैसा आवरण हटा—
हम ढूंढते थे कि विरह मिल जाये—
हम जोड़ते रहे कि ऋण हो जाये
ओ रिक्त, भरे पात्र में हम तुझे ढूंढते रहे,
ओ निर्लिप्त, हम रससिक्त तुझे ढूंढते रहे,
कण-कण में तूं ऋण है
सुइयों की ढेरी में तू तृण है
'हम हारी माने बाबा' तुझसे
धन्य, धन्य ओ 'नहीं', तूं कहाँ नहीं है ?
अब न ढूंढूंगा कहीं—
मिलूंगा वहीं
जहाँ तूं 'नहीं' है ।

•

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

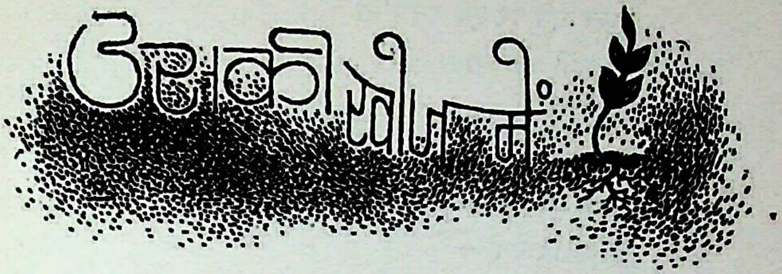

उसे ढूंढते हो
जो खोया ही नहीं
मिलेगा कब कहाँ ?
जो कभी मिला ही नहीं ?
फिर खो गया कैसे ?

काशी काबे कैलाश ढूंढते हो
बाहर ढूंढते हो—
भीतर ढूंढते हो
पर वो है कहाँ ?
जिसे तुम ढूंढते हो ?

कोई पूरब की ओर मुँह करके उसे पुकारता है,
कोई पश्चिम में गुहारता है।
वो उधर दक्खिन में है
जिधर से बसन्ती बयार आती है,
कोई उत्तर में हिम धवल
नगराज के आँचल में,
उसको छवि निहारता है !
मगर वह कब दिशा से बँधा है ?
वह कब समय पर टिका है ?
वह दूर है—
क्षितिज सा दूर है—

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

चलते रहो पर एक कदम भी
जो कभी पास आता नहीं !
वह पास है—
कल्पना सा
छन में दूर की दौड़ लगाता !
वह अन्तर में है—
जैसे बीज में वृक्ष छुपा हो !
वह बाहर है—
किन्तु उसे पाना जैसे
किरणों को हाथ से पकड़ना,
बादलों को आँचल में भरना,
हवा को बाँधना !

नहीं—
व्यर्थ है उसे ढूंढना !
वह कहीं नहीं है,
और सब कहीं है।
वह चिरन्तन सत्य—
जान लिया, पा लिया,
घबरा गये, खो गया।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

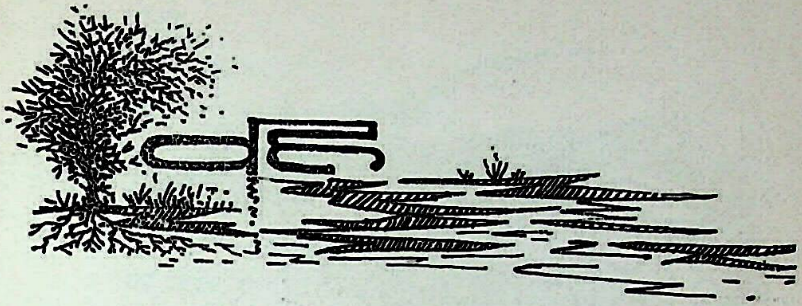

दौड़ते हो उसके पीछे
जिसके हाथ पाँव नहीं हैं ?
पूछते हो पता उसका
जिसका नाँव गाँव नहीं है ?
कहते हैं वह—
रहता है हर जगह
मगर मिलता किसी भी ठाँव नहीं है !

कण्ठ नहीं है पर गाता है—
बिना कान के सुन पाता है—
उजड़ी नगरी में सबसे मिलने जाता है,
बिना तार का जंत्र बजाता है,
ऐसे अरूप से मिल कर क्या करोगे ?
मिला भी तो क्या कहोगे, क्या सुनोगे ?

कहते हैं—
उससे जो मिला—उसमें जा मिला !
इसलिये बन्धु सावधान, सोचो ।
क्यों अपनी दुर्गति करवाओगे ?
मिलने गये तो वहीं रह जाओगे
'पूत' लेने गये 'प्राण खसम' खो आओगे ।
उसे गरज है तो वह रूप धर कर आयेगा
चुप से बैठो जी, मेरी कसम तुम क्यों जाओगे !

•

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

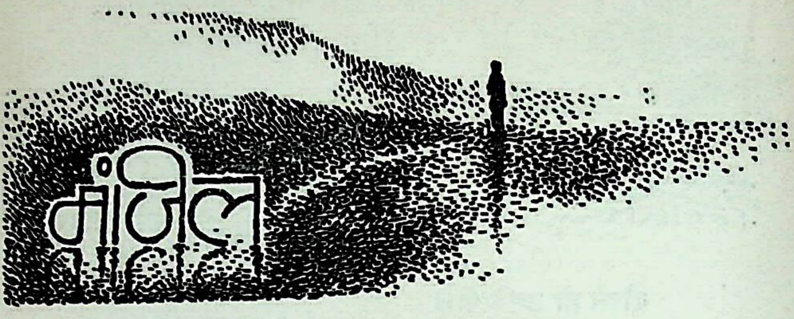

गुरु ज्ञानी फरमाते हैं—
मंजिल तक जाना है,
राह कठिन अपनाना है।
बतलाते हैं—
पथ में कैसे कैसे अवरोध मिलेंगे,
किस किस दिशि से जाना होगा।
कहाँ कहाँ पड़ाव मिलेंगे
कहाँ क्षण कुछ रुक जाना होगा।
पथ का सम्बल क्या होगा,
विचलित होने का फल क्या होगा;
कठिन यम, नियम, संयम, अनुशासन,
कष्ट बहुत सहन कर
काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद, मत्सर से बचकर
आँख मूंद कर
गुरु आदेश का पालन करते
आगे बढ़ते जाना होगा!

साहस से यदि चल पाये—
बीच राह में जो नहीं घबराये—
तो मंजिल तक जा पहुँचोगे
सुख अनिर्वचनीय बहुत दिनों तक लूटोगे।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

किन्तु,
सन्देह एक जगा है—
क्या सचमुच कोई मंजिल है ?
या सब मृगमरीचिका है, छल है, धोखा है ?

यह धरती कन्दुक सी गोल
यह विश्व भी गोल मटोल
ब्रह्म शायद स्वयम् बिन्दु गोल
इसपर आगे कहाँ बढ़ोगे ?
यह दिग्विहीन विश्व है—
यह भवसागर है—
इसमें पथ कहाँ गढ़ोगे ?
किस ओर, किधर, कहाँ चलोगे ?

वह जो मंजिल-सा लगता है
स्वर्ण भवन सा दूर चमकता है
वह सचमुच है या केवल छल है ?
अभी यही न तय हो पाया है।
कोई बोले तो, कौन वहाँ तक हो आया है ?

नहीं पथ, मंजिल की बातें छोड़ो
वह जिधर ले चले, चलो—
उसकी मरजी पर अपने को छोड़ो—
कोई मंजिल है या नहीं
यह जानकर ही क्या करना है ?
मुझको तो इससे—उसतक जाना है
वहाँ गोद में उसकी मरना है !!

•

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

मुक्ति

आस्था की कड़ियाँ खड़खड़ाओ
शायद विश्बास के द्वार खुल जायें।
मुक्त हो तन-कोट का बन्दी, बाहर आये—
विश्व के अपरमित अपार विस्तार में विचरे—
अपना मूल बसेरा सम्भव है पा जाये !
अगर चाहते हो—
मुक्त गगन में विचरे पंछी—
अनहद गीत सुरीले गाये
मंजिल मंजिल बढ़ता जाये,
तो,
आस्था की कड़ियाँ खड़खड़ाओ—
शायद विश्वास के द्वार खुल जायें !

●

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

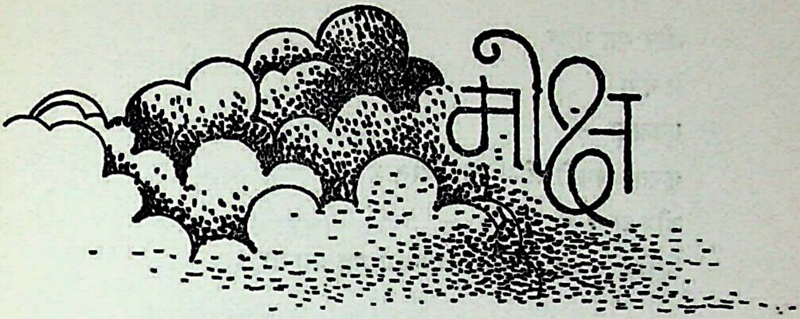

मोक्ष

मंच पर आकर
भूमिका निभाने से विराग ?
यह कैसी भागम्भाग ?

यह मोक्ष के लिए
इतने कठिन प्रयास ?
जप-तप
यम-नियम संयम-उपवास
किस लिये ?
किस लिये ??
माना
जग मिथ्या है
माया मोह का मेला है।
झूठे रिश्ते-नाते
सब जीते जी के नाते।
पर इनसे भागने का उपक्रम क्यों ?
यह सब तो रंगमंच पर भी होता है
पर
परदा खुलने पर
नाटक के झूठे होने की बात
कौन कलाविद् कहता है ?

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

और यह मोक्ष
है क्या ?
एकब्रह्म—
करता अपनी लीला का विस्तार
और अन्त में
सिमिट जाता उसी में मायामय यह व्यापार।

ये प्राण
अंश महाप्राण के—
यह मोक्ष
उसी ब्रह्म ज्योति में
लीन होना।
आज हो—
कल हो—
मोक्ष तो होना ही है !
सिर्फ तुम्हें क्या
सारे जगत को
उसी परम तत्व में
लीन तो होना ही है !

इसलिये तो आये नहीं—
कि जल्दी से लौट जाओ ?

फिर जल्दी भी क्या है
मूल तत्त्व में मिल जाने की ?
मोक्ष या परमपद पाने की ?

प्रश्न तो ये है
कि महाप्राण से—
अंश यह बिछुड़ा क्यों ?

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

रचा परम पुरुष ने
माया-मोह का यह मेला क्यों ?

नटनागर की यह लीला
तुम उसके पात्र
जम कर भूमिका निभाओ।
भागो मत—
घर तो आखिर जाना ही है
मोक्ष मुक्ति तो पाना ही है।
लेकिन बन्धु
पटाक्षेप तो होने दो।

•

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

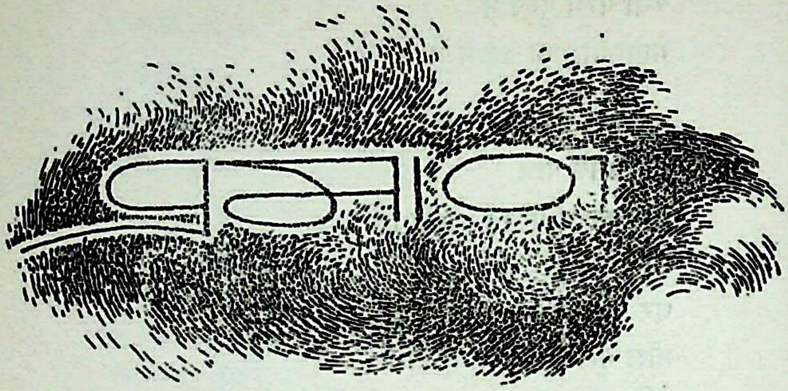

तुमने मेरे अस्तित्व का भौतिक प्रमाण माँगा है।

आँख से देखना चाहा है मुझे
हाथ से छूना चाहा है मुझे
कान से सुननी चाही है मेरी वाणी
मगर
आँख कब देख पाती है ?
सच झूठ का कहाँ भेद कर पाती है ?
कितनी बार रस्सी को साँप बनाती है ?
और हाथ कब हवा को पकड़ पाये हैं ?
नयन मंदने पर कब किसी को पहिचान पाये हैं ?
और झूठ सुनने के आदी ये कान—
कान, कि जो स्वर भेद तक नहीं कर पाते
कभी ऊँचा सुनते हैं
कभी नीचे स्वर अनसुने कर जाते
ये सुनेंगे मेरी वाणी ?
इन अस्थिर इन्द्रियों की आधारशिला पर
तुमने मेरे अस्तित्व का भौतिक प्रमाण माँगा है !

तुम अरूप को आँख से देखोगे,
तुम अस्पृश्य को छू कर गुनोगे,

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

तुम अश्रव्य ध्वनियाँ सुनोगे ?
ओ आँख वाले अन्धे,
कर-हीन प्राणी,
ओ कान के कच्चे—
मैं तो आँख में बसा हूँ
सदा तेरे हाथ में रहा हूँ
कब न कान में गूंजता रहा हूँ
फिर भी—
तुमने मेरे अस्तित्व का भौतिक प्रमाण माँगा है।
या किसी से टोकरी भर कर आकाश माँगा है॥

मुझे देखना है ?
तो आतम के दीप जलाओ
हवा में गूंजता अनहद बंशी रव सुनो
नयन मूंदो, हाथ जोड़ो
भौतिकता का जाल तोड़ो
अस्तित्व को मिटा कर
नास्तित्व के प्रकाश में आओ
मुझे देखोगे तभी समझोगे
कि मैं स्वयं अपना प्रमाण हूँ।

●

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

"मैं" का घेरा

'मैं' ने मेरा अस्तित्व घेर लिया है—
उसमें 'तुम' आ न सकोगे
इतना संकुचित है यह घेरा
कि उसमें तुम समा न सकोगे।

व्यर्थ हठ न करो साधो
तोड़-फोड़ की बात न करो साधो
"मैं" टूटा तो मुझको
उसमें "तुम" पा न सकोगे।

"मैं" के बन्धन कसते जाते
'दुई' की गाँठ लगाते जाते—
ज्यों-ज्यों दूरी बढ़ती जाती
ये तेरे मेरे धागे उलझे जाते।

तुमसे मुझको केवल इतना कहना है
यह घुलमिल जाने की बातें रहने दो,
तुम चाहो तो "मैं" बन जाओ
मुझको तो यों ही रहने दो।

●

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

अब मैं क्या करूँ

जब भी मैंने तुम्हारे चरण छूने को हाथ बढ़ाये—
उन्हें अपने ही पैरों पर पड़ा पाया !
तुम्हीं बताओ, ओ पगहीन,
अब मैं क्या करूँ ?

जब भी भावविभोर हो मैंने तुम्हारे गीत गाये
कंठ से निकले स्वर मेरे अपने ही कानों से टकराये
तुम्हीं बताओ, ओ श्रुतिहीन,
कैसे तुम्हें अपनी अरज सुनाऊँ ?

सोचा था यदि गिरूँगा, तो तुम्हारे हाथ सहारा देंगे,
पर
जब भी गिरा, देखा
उठानेवाले मेरे अपने ही हाथ थे
तुम्हीं बताओ, ओ करहीन—
कब तुम्हारे करों का
पावन स्पर्श मिलेगा ?

जब भी मैंने तुम्हारे दर्शन करने चाहे
अंतर के दर्पण में अपना ही प्रतिबिम्ब देखा—
तुम्हीं बताओ, ओ अरूप
तुम्हें देखने के लिए मैं क्या करूँ ?

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

लगता है या तो तुम इतने बड़े हो
कि देखने में ये नेत्र असमर्थ हैं ?
या फिर तुम इतने छोटे हो
कि नजर से परे हो
तुम्हीं बताओ, ओ अनाम,
यह भेद कैसे मिटाऊँ ?
कहाँ ढूंढूं तुम्हें, कहाँ देखने जाऊँ

कैसे अपने आप से छूटूँ
कैसे तुम तक आऊँ ?
तुम्हीं बताओ, ओ छलिया
अब मैं क्या करूँ ?

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

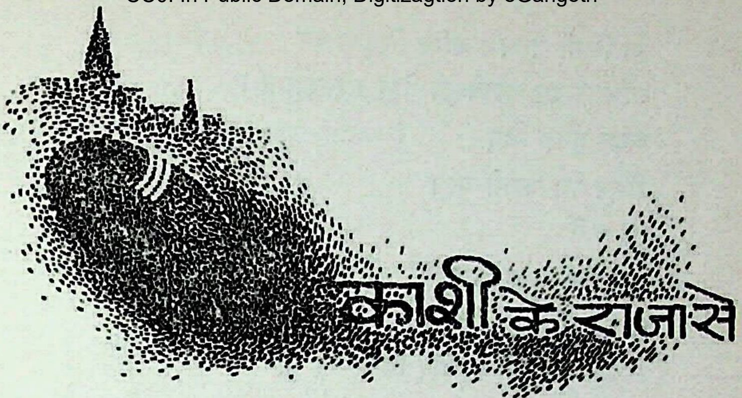

काशी के राजा से

ओ
राजा काशी के
मुक्तिधाम अविनाशी के
हे देवाधिदेव,
हे विश्वनाथ—
अब तुम्हीं मुझे इस उलझन से उबार सकते हो !

मैं तुम्हारी पूजा अर्चना करना चाहता हूँ
हे देव दयानिधि पशुपते
मैं, तुम्हारी प्रजा की आरत पुकार तुम्हें सुनाना चाहता हूँ !
किन्तु जब भी गंगाजल से स्नान कराने आया
तुम्हारी पिंडिका इतनी छोटी हो गयी कि
जल में डूब गयी
तो कभी
विग्रह इतना विशाल हो गया कि
उसका एक अंश भी भींज न पाया
शायद सागर के जल भी कम पड़ते।

चन्दन चर्चित करने चला तो
लगा विशाल चन्दन वृक्षों पर
चन्दन का लेप कर रहा हूँ

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

या किसी रक्ताभ अग्नि जिह्वा पर
लाल चन्दन चढ़ाने की चेष्टा कर रहा हूँ।
श्रद्धा सुमन लिए—
बिल्व पत्र चढ़ाने चला
तो कभी
एक बिल्व पत्र भी अधिक हो गया
और कभी लगा कि
विग्रह को ढकने के लिए बिल्व-वन भी
अपर्याप्त होगा !

जब भी ध्यान लगाया
ओ कैलाशी—जब भी चरण छूने को
हाथ बढ़ाये
तो कभी हाथ इतने छोटे हो गये
कि उन्हें जोड़ना भी असम्भव हो गया
तो कभी चरण इतने विशाल हो गये
कि उनमें कैलाश भी लुप्त हो गया।

आकुल होकर सोचा
चलकर मैय्या से अरज करूँगा
किन्तु जब तुम्हारे दरबार में आया तो
उस हिम अरण्य में कोई न था
केवल तुम थे
अकेले–एकाकी–अखण्ड–अपार समाधि लगाये
अचल अविकार स्थाणु
और तब
अष्ट चक्र नवद्वार डाँक कर
यह क्षीण स्वर—
पुर अयोध्या तक कैसे पहुँच पाता ?

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

हे भोले नाथ—
इस माया नटिन ने बड़ा तमाशा किया है
ठगिनी ने मुझे बहुत सताया है !

अब तुम्हारी कृपा हो

तभी इस भ्रम जाल से—
इस मोह पाश से—
मुझ मूढ़ अकिंचन का उद्धार हो सकता है।

हे देव—
मैंने यह भी सोचा कि—
मैं अज्ञानी हूं
किसी ज्ञानी पण्डित से निवेदन करूँगा कि
मेरी प्रार्थना तुम तक पहुँचा दे
एक धीमान, विद्वान, पंडित श्रीमान् मिले
मिले जैसे—
हों वशिष्ठ विश्वामित्र एक साथ मिले
किंतु उनकी तेजस्विता से घबरा कर मैं
कुछ कहने का साहस न कर पाया
और
निर्वाक खड़ा उनका प्रभामण्डल देखता रहा !

भोलेनाथ
तुम तो काशी के राजा हो—
पर वे राज-राजेश्वर हैं*
राजा स्वदेश में पूजित होता है
पर ये सर्वत्र पूज्य हैं
उनसे कैसे क्या कहूँ
तुम्हारी प्रेरणा हो तभी उनकी कृपा मिल सकती है
हे औघड़ दानी,
क्या इतना भी न कर पाओगे ?

●

* पंडित राजराजेश्वर शास्त्री जी के अभिनन्दन के अवसर पर अर्पित रचना।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

अंधेरा

मुझे अंधेरा दो
बुझा दो ये ये दीप सारे
मूँदो दरवाजे खिड़कियाँ सब
लो सूर्य अस्त हो गया है
अब कुछ ऐसा करो
कि चाँद भी न निकले
और इन सितारों को
सघन श्याम बादलों से ढँको
कैद कर दो जुगनुओं को कहीं
रात को नहलाओ काले काजल से
ऐसा अंधेरा जिसमें हाथ को हाथ न सूझे
ऐसा अंधेरा जिसमें राह को राह न सूझे
मेरे उसके बीच रोशनी की
यह छलभरी चिलमन उठाओ
और मुझे अंधेरा दो।

सुना है वो खुद रौशन है
बहुत चमकदार है
तेजोमय है
अपूर्व प्रभा का पारावार है
मैं देखूंगा—
अंधेरे में वह कैसे छुप पायेगा ?

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

मैं देखूँगा—
आँखों से ओट वह कहाँ रह पायेगा ?
तम के सागर में
वह दीपक एक अकेला कैसे छुप पायेगा ?
मुझे अंधेरा दो !
मैं उसे देखूँगा—
हाँ उसे—जो
रोशनी की आड़ में छुपा बैठा है !!

•

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

अनुपम

वो अनुपम है
मत उपमाएं झुठलाओ
मत उसको ऐसा-वैसा बतलाओ।
मत कहो कि शमा उसे तुम
वह कब जलता है
वह कब बुझता है
वह कब तूफानों से डरता है
पहले पंख जले परवाने तो दिखलाओ ?
मत उसको ऐसा-वैसा बतलाओ—
वह अनुपम है।

मत कहो कि वह गुल है या बुलबुल है
गुल जो आज खिला—
कल मुरझायेगा।
वह बुलबुल भी कब
पंख बिना उड़ पायेगा।
इनसे तुलना किसकी ? किससे तुलना किसकी ?
मत उसको ऐसा-वैसा बतलाओ—
वह अनुपम है।

वह सौ सूरज से उजला है
वह श्याम गगन से गहरा है

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

वह अपने जैसा है
पूर्ण अरूप अनाम
मत कहो उसे सीधा सादा
कुटिल, वक्र या वाम
मत उपमाएँ झुठलाओ
मत उसको ऐसा-वैसा बतलाओ—
वह अनुपम है।
किसने उसको परखा है—किसने उसको जाना है—
वह अनुपम है॥

•

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

शरणागति

इतनी बड़ी रात का तम हरने
इतना छोटा सा प्रदीप ले आये हो ?
छोटी छोटी आँखों वाले ओ भुनगों,
तुम हाथी का दर्शन करने आये हो ?
इन कागज की नावों पर सिन्धु तिरोगे ?
इन नन्हें पंखों पर गगन के पार उड़ोगे ?
यह दर्शन की अकुलाहट—
यह सत्य जानने का हठ—
यह अणु-परमाणु में ताक झाँक
यह विश्व के ओर छोर की माप-जोख
यह शक्तियों से बच्चों सो खिलवाड़
यह सितारों की सैर के पागल प्रयास
यह सब कहाँ ले जा रहा है तुम्हें ?

नहीं रुको—
टुक सोचो
यह गलत है
व्यर्थ का हठ है
प्रार्थना करो, अर्चना करो
माँगों करुणामय से
'मुझे आँख दो जो देख सके तुम्हें,

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

मुझे हाथ दो जो छू सके तुम्हें
मुझे बुद्धि दो जो गुन सके तुम्हें'
और शरणागत हो,
छटपटाहट मिट जायेगी
जल की मछली
जल पा जायेगी।

•

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

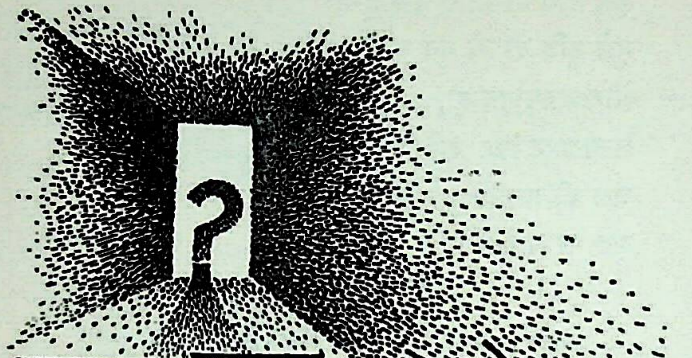

क्या तुम आये थे?

जेठ की लू-भरी सनसनाती दोपहरी में
मैंने तुम्हारी उर्मिल उपस्थिति का अनुभव किया है।
सुनसान सन्नाटे में
खिड़कियों के पर्दे उड़ रहे थे
लगा जैसे सैकड़ों व्यक्ति आ-जा रहे हों
बाहर वृक्षों को झकझोरता था कोई
धूल के बादल उठ रहे थे
मानो कोई सेना प्रयाण कर रही हो—
हिला घर के अन्दर का दरवाजा
लगा जैसे कोई अभी-अभी अन्दर गया
दीवार पर हिलता कैलेण्डर कह रहा था
अभी-अभी किसी ने उसे छुआ था।

छलनामय यह मेरे अकेलेपन का लाभ क्यों उठाते हो?
मैं सोता हूँ तो पास बैठे रहते हो
जागता हूँ तो चुपके-से उठकर चले जाते हो!
किन्तु आज सहसा—
जेठ की लू भरी सनसनाती दोपहरी में
मैंने तुम्हारी उर्मिल उपस्थिति का अनुभव किया है।

•

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

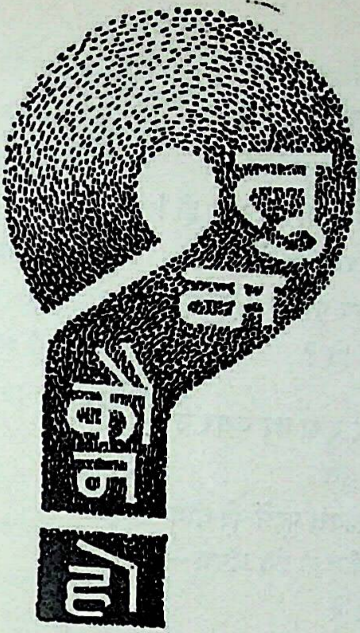

मैंने नहीं पहचाना
तुम कौन हो ?
हाँ आवाज कुछ जानी पहिचानी है !
हाँ शायद
कभी देखा होगा,
मिले होंगे !
किन्तु अब
स्मृति के कोहरे में—
बात सपने सी
आयी गयी सी—
विस्मृत,
भूली बिसरी है।
मन की अंधेरी गलियों में
खोयी है
वह छोटी सी याद

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

अब
ढूँढे नहीं मिलती
जैसे किसी महावन में
या तम के महासागर में
कोई नन्हा दीप खो गया हो !
फिर भी भटकती चेतना
झुंझला कर पूछती है
तुम कौन हो ?

आज जब दुःख का ज्वार उमड़ा है
पीड़ा के शूल
मन के कोमल फूलों को बींध रहे हैं
मानवी भीड़ के इस जंगल—
बीयाबान में
मैं
अकेला
उलझा
किंकर्त्तव्यविमूढ़
खुली हवा में
घुटते जिसके प्राण !
तभी कोलाहल भरे सन्नाटे में,
घबराहट की शान्तिदायिनी छाया में
चुपचाप
पता नहीं किस ओर से
तुम आयी हो—
हौले से आवाज दी है—
'क्यों थक कर बैठ गये
क्यों निराश हो कह रहे—
'नान्यः पंथाः विद्यते अयनाय'

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

उठो तो—
मैं आशा दीप ले आयी हूँ
साहस के हाथों
पथ प्रशस्त कर आयी हूँ
उठो
और उद्घोष करो
'उत्तिष्ठित, जाग्रत, प्राप्य'
पथ विशाल है
'सत्येन पंथाः विततो देवयानः'
हाँ
इसी देवयान पथ से—
मेरे ढिग आओ,
साहस से आओ,
सबल हो आओ,
क्योंकि बलहीन न पास मेरे आ पाता
आओ-आओ'
और
चकित सा मैं पूछ रहा
तुम कौन हो ?

और हठ तुम्हारा
मुझे जानो, तत्त्वमसि।
पर हाँ कौन तुम
तुम !
तुम !!
तुम जो इतने पास रहती हो
चिरकाल से साथ रहती हो
और मैं
किस नींद में डूबा

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

किन छलनामय सपनों में खोया,
पथ भूला,
अबतक तुम्हें पहिचान न पाया
कि मेरी तुम कौन हो ?
तुम कौन हो ?

आज इस बेबसी के आलम में
साथ जब सब छोड़ चले,
मैं निरीह निराश्रय—
तब कौन सा नया मन्त्र ले
तुम आयीं,
साथ चलने,
साथ मरने,
क्यों नहीं अब भी पहिचाना
मेरी तनवीणा की झंकार
क्यों तुम्हारी मुखर ध्वनि को नहीं जाना
विश्व के कोलाहल में
मधुर इस आवाज को क्यो अकान किया
सबसे अलग इस आवाज को क्यों अनसुनापन दिया
मरीचिका के सूर्य देखे—
पर क्यों आँचल में प्रकम्पित पथ-दीप न देखा ?

आज लक्ष्यभ्रष्ट
जीवन की भूल-भुलैया में
भटका-भटका सा मन—
तुम्हें देख कर
कुछ याद करता है
उस पास पड़े हाथ को
दूर दिगंत में पकड़ने की कोशिश करता है
और असफल हो हाहाकार करता है !

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

तुम कहाँ हो ?
तुम कौन हो ?
मेरी साथी—
मेरी पथ प्रदर्शक—
काश,
कि मैं तुम्हें जान पाता
पहिचान पाता
अन्तर दूर कर पाता।

बोलो—
मेरी अन्तरआत्मा
तुम
चुप क्यों हो गयी ?

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

चारों ओर से घिर गया हूँ
निरीह चूहे सा
मुसदानी में फँस गया हूँ।
राहें सब मुंद गयी हैं
गलियाँ सब बंद हुई हैं
कुंठाओं के जाल घेरते
वेदना के शूल वेधते
अचेतन के अंधकार में
कितने ही घातक जन्तु घेरते !
अपने ही हाथों
जो दीवारें चुन डाली थी—
अब पथावरोध बन गयी हैं
माया मोहपाश के जो सामान संग्रहे
वही अब बोझ बन गये हैं
अरे, मैं मान-सर का पंथी
पंख कटे हँस सा
इस वैतरणी के बीच पड़ा
ओ कैलाशी, तुम्हें पुकारता
कहीं तो कोई मणि-दीप जला दो
आशा की कोई एक किरण तो दिखा दो।

●

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

स्वप्न मिलन

मैंने उसे देखा है
जिसे नेत्र देख नहीं पाते
शायद उसकी आवाज भी सुनी है
जिसे कान सुन नहीं पाते
उसके स्पर्श का अनुभव भी किया है
पर स्वयं उसे छू न पाया
क्योंकि तब मैं खुमार में था
अज्ञान के अंधकार में था

और

अब

एक कसक सी है
व्याकुल वेदना-सी है
अनबुझी इक जलन है
और आकुल अंतर ढूँढता है
स्वप्न के उस मिलन को—
रवि शशि किरणें रचती
विरह तट पर स्मृतियों के मेले
फिर कैसे-कैसे स्वप्न अनेरे—
नभ में दुख की बदली
मन में घनश्याम घनेरे
बस चलने दो यह चक्कर,
आओ मान लें पिय आज मिले रे।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

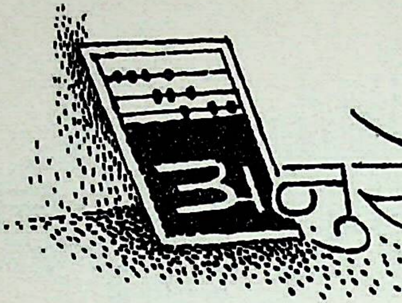

अनुरोध

मन की सिलेट पर
बैठे बैठे
गदे चित्र
कामुक विचार
खयाली पुलाव
फालतू बकवास
बेहूदा माँगे
अंकित करते रहते हो
और मैं
उन्हें पढ़-पढ़ कर
सोच सोच कर
डूब जाता पंकिल खयालों में
रसभरे दिवास्वप्नों में—
खो जाता वासना के महलों में
रंगीन मादकता में—
फिर उतरता नशा
विकल हो जाता
घबराता !
क्यों ?
क्या मजा आता—
दुष्ट बालक

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

मुझे सताने में—
व्यर्थ के प्रलोभन देकर बहलाने में ?
क्षणिक सुख की पीड़ा के व्रण
अवसाद के क्षण
छटपटाते प्राण
घुटता श्वास
किसी की जान जाती
तुम्हारी क्रीड़ा कहलाती !
सुनो,
अब ऐसा करो—
पोंछ डालो यह स्लेट
और
अंकित करो उस पर
अपना नयनाभिराम
सुन्दर साँवरा सलोना
बाल रूप मनमोहन !
फिर,
निशिदिन
मैं उसे देखा करूँ
और छका रहूँ।

•

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

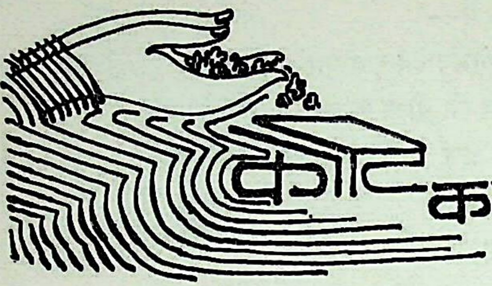

कोटि-कण्ठ से प्रार्थना

ओ विराट्
मैंने तुम्हारे दर्शन करने चाहे
किन्तु तुम्हें देखने के लिए
कोटि नयन कहाँ से लाऊँ ?
मैंने तुम्हारे साथ चलना चाहा
किन्तु तुम्हारा पथानुसरण करने के लिए
कोटि चरण कहाँ से लाऊँ ?
मैं क्षीणकण्ठ, ओ नीलकण्ठ।
तव महिमा गाने को कोटि कण्ठ कहाँ से लाऊँ ?
जब भी अपनी विवशता, उलझन
तुम्हारे दरबार में रक्खी, सहारा चाहा,
ओ कोटि-बाहु तुमने सहस्र-सिर हिला दिये !
क्या मेरा पथ निर्देश करने के लिए—
करोड़ों में एक हाथ भी खाली नहीं है ?
कहते हैं तुम्हारे चरण में ही सृष्टि सीमित है
और मैं सृष्टि के चरण में चिपके
किसी धूलिकण पर खोया हूँ।
मैं क्षुद्र, तुम विशाल, ओ दीनदयाल
कोटि जन्म में भी न सुलझेगा सवाल।
करुणामय, बस एक बात बताओ
ओ कोटितन क्या तुम कोटि हृदय भी हो ?
दिल एक अगर हो
तो मुझे अपने अन्तर में बसा लो
ओ कोटि कण्ठ कुछ तो बोलो और मुझे अपना लो।

•

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

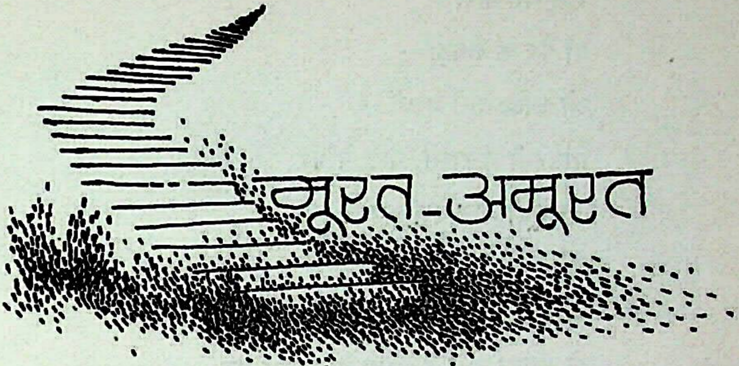

मूरत-अमूरत

ये
मूरतें नहीं—
सूरतें हैं,
जानने की उसको
पहिचानने की उसको।
ये मूरतें नहीं—
सीढ़ियाँ हैं,
उस अदृष्ट सिंहासन तक जाने की
जहाँ तक
यहाँ से
दृष्टि नहीं जाती,
रोशनी बहुत है—
नजर ठहर नहीं पाती।
कुछ दूर आँख मूंद कर
आगे जाना है—
कुछ दूर इन्हीं सहारों को अपनाना है!

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

शर्म मत करो
दो पैर के लंगड़ों—
ओ आँख वाले अन्धों—
तिलस्मी हैं रास्ते, बुद्धि से परे,
नैन मूँदो और दर्शन करो
निर्गुन अमूरत के—
उसके,
जो हँसता रहा है तुम्हारी मूर्खता पर
जो साथ आया है तुम्हीं में बैठ कर यहाँ तक !

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

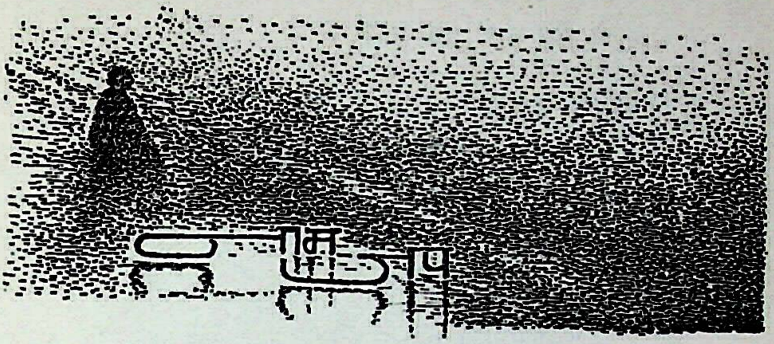

जब भी नाम तुम्हारा जपने लगता
विविध विचार दौड़े आते
आँधी से मन पर छा जाते
तिनके सा नाम उड़ा ले जाते !
जब भी नाम तरी ले—
करने चलता सागर सन्तरण
उठने लगते वासना के ज्वार—
बरबस नैया किनारे पर फेंक जाते !
बोलो, कैसे आऊँ पास तुम्हारे ?

एक तो सागर अपार—
तिस पर यह नैया छोटी लाचार
ये विकारों के भीषण झंझावात
दुर्बल तन, निर्बल भुजाएँ,
हारा जाता सारा पुरुषार्थ,
मेरे पास वे तैरते पाषाण नहीं है
बोलो नाम का सेतु बाँधू कैसे ?
बोलो, कैसे आऊँ पास तुम्हारे ?

राम लिखूं, श्याम लिखूं, कोई भी नाम लिखूं
हरबार फेनिल लहर मिटा जाती है,

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

कबतक बैठा बालू के किले बनाऊँ
बोलो, कैसे आऊँ पास तुम्हारे ?

कहो तो यहाँ इसी सिक्ता में डूब जाऊँ ?
मैं, तुम, नाम और सागर—
ये लहरें और किनारे
सब एक साथ मिट जायें।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

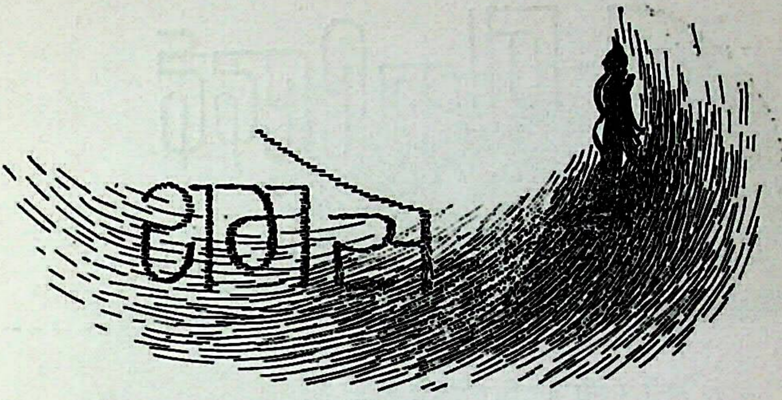

राम! कई नाम तुम्हारे
एक नाम है राम
मन्दिर बहुत बने जग में
पर सबसे सुन्दर मनधाम
पथ बहुत बने जग में
पर सबसे सुन्दर जप-नाम।

मैं सूखी प्यासी धरती
अचल पड़ा तुम्हें पुकारूँ—हे घनश्याम
किसी नाम से आजा रे
किसी धाम से आजा रे
सभी किरण पथ हैं,
हैं तेरे ही सब धाम!
तू प्रकाशमान, ओ भगवान्
मन वृंदावन में बरसो
नील सरोरुह सुन्दर
करुणा सागर घनश्याम
मेरे राम—मेरे राम!

•

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

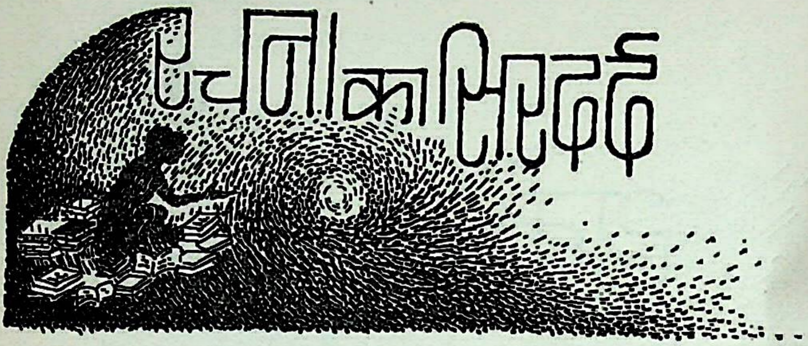

मेरी रचना सुन सिर दुखने लगता है
उसकी रचना सुनते तो सिर फट जाता
तुम काव्यलोक के रहनेवाले
तुम शब्द सुमन के चुनने वाले
इन अनगढ़ बकवासों से—
इन अर्थहीन प्रलापों से—
घबराओगे, चिढ़ जाओगे !
पर तुम सरवर की मछली हो—
विमल कमल बीच
निर्मल जल में जो
सुखभरी सानंद विचरती है !
मैं खारे सागर की सेवार और काई—
मीठे जल में अकुलाई
सीमा के बंधन से घबराई—
अनचाहे बीच तुम्हारे आई !
तुम इस धरती के वासी हो
नैन जहां तक लख पाते
वहीं गगन छोर बताते हो—
मैं आकाशहीन, विश्व का प्राणी
मत पूछो मुझसे मेरी बात,

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

क्यों रहता हूँ व्याकुल दिन रात !
तुम अपने पिंड पर
हँसते गाते, मस्त मगन हो
अपने छंद ताल लय में
बाँधा करते धरती और गगन हो
और मैं जैसे उतरे नशे में
बस चीखता, चिल्लाता हूँ
बेसुर, बेताल, गीत-अगेय गाता हूँ ।
तुम क्या जानो मैं किसे बुलाता हूँ !
बँधु, उस विराट को जिसने देखा है,
छू आया जो विद्युत की रेखा है
वह न कभी होश में आयेगा—
वह न कभी सुर में गायेगा—!
मत सुनो तुम मेरे अगीत ये
मत कहो कभी ये रचे गये—
मैं था कब कि सिर दुखे
मुझको बिसार दो ओ मेरे मीत नये !
मैं बाँगड़ देश का वनवासी—
अब न कभी उपवन में आऊँगा
मैं निरगुनियाँ गुन क्या जानुं
क्षमा करो, अब न कभी पीड़ा पहुँचाऊँगा !
लो राम राम, यह सादर प्रणाम
लो अब जाता हूँ
यह कूड़ा करकट कतवार सब साथ लिए जाता हूँ
लो हँसो कि अब सिर दर्द चला गया
लो हँसो कि अब आसमान खुल गया !

•

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

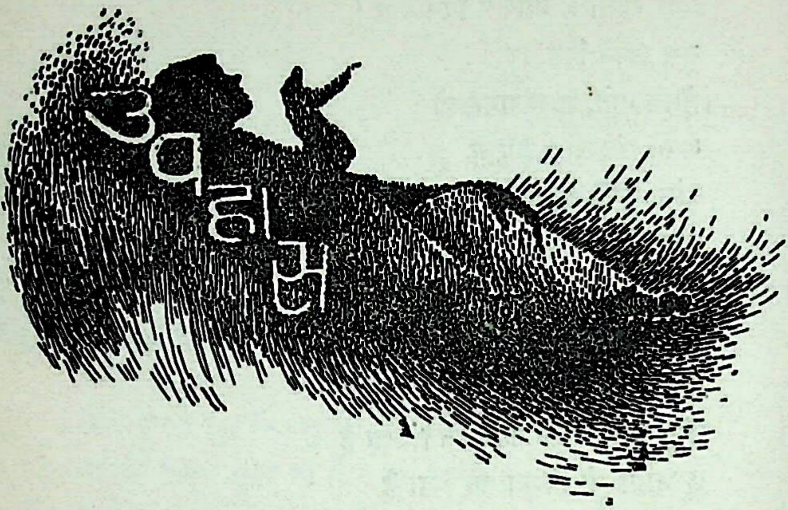

तुमने मेरा उपहास कराया।

तुम चुपके से मेरे घर आये
ये छन्द हीन
ये बन्द हीन
ये टेढ़े मेढ़े
अटपटे ओड़े भोंड़े
अगेय गीत लिखाये—
अपनी रचना, मेरे सिर पर थोपी
फिर अपना आप छुपाया
तुमने मेरा उपहास कराया।

मैं कब कवि था जो इनको गाता ?
कब वाणी का वरदान मिला मुझे कि इन्हें सुनाता ?
फिर जग ने चुपके से पलते
इन विकलांगों को देखा
बिना नाक कान के इन गीतों को देखा
अवैध कहा कवियों ने, निर्ममता से ठुकराया
तुमने मेरा उपहास कराया।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

तुम गूँगे बन कर बैठे हो, मत बोलो
पर मेरे मुँह में जीभ बड़ी है
मुझको तो साहस से कहने दो
ये गीत तुम्हारे हैं—
ये भाव तुम्हारे हैं—
हस्ताक्षर मेरे हो सकते हैं,
पर ये सब मन्त्र तुम्हारे हैं !
जैसी बेतुकी सृष्टि तुमने रच डाली है
वैसे ही अनगढ़ गीतों का अम्बार लगाया
तुमने मेरा उपहास कराया ।

तुम सत् चित् आनन्द हो,
तुम पीर परायी क्या जानो ?
कभी लगी है क्या ठोकर तुमको
तुमने गिरने का दुःख क्या जानो ?
तुमने तो खेल खेल में दुनिया रच डाली—
करते रहते हो उलटी सीधी मनमानी,
ओ, दिल-लगी करनेवाले
तुम दिल की लगी क्या जानो ?
व्यंग शरों से है मन अकुलाया—
तुमने मेरा उपहास कराया !

अब तो कहने दो मुझको दुनिया से
ये गीत तुम्हारे हैं !
ये गीत तुम्हारे हैं !!
ये गीत तु-म्हा-रे—हैं !!!
मैं जंगल का झरबेरी चुननेवाला,
बटोर इन्हें कहीं से लाया,
तुमने मेरा उपहास कराया ।

•

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

परिशिष्ट

श्रीमाता का मन्दिर

महामहोपाध्याय डॉ० गोपीनाथ कविराज

यह विश्व पराशक्ति श्री श्रीजगन्माता के विश्राम और लीला का नित्य निकेतन है। उनका लीलाक्षेत्र यही है एवं लीलातीत विश्राम भूमि भी यही है। सिद्ध योगी जन, अपने-अपने दृष्टिकोण के अनुसार जो जिस मार्ग के पथिक हैं तद्रूप, माँके मन्दिर का दर्शन करते हैं। सृष्टि, स्थिति, संहार विश्व के बहिरंग प्रदेशों में नित्य चल रहे हैं, किन्तु विश्व के अन्तर्गृह में किसी प्रकार की कलध्वनि नहीं है। वहाँ शान्त परिवेश के मध्य माँ परमेश्वर के साथ सामरस्य प्राप्त करती हुई विराजमान है। वहाँ सृष्टि-संहार की कलध्वनि नहीं पहुँचती। विश्व जननी और विश्व पिता सभी द्वन्द्वों का परिहार करते हुए अखण्ड अद्वय-स्वरूप में वहाँ विराजमान हैं। वहाँ शक्ति का स्पन्दन एवं शिव का नित्य अस्पन्द-भाव अद्वय समरस स्वरूप में नित्य विराजमान है। विश्व महाशक्ति का कार्य है। कार्यरूप में स्फुरित होने के पहले ही यह महाशक्ति के साथ सम्पूर्ण तादात्म्य प्राप्त करते हुए महाशक्ति के साथ ही विराजमान है एवं परम शिव पूर्ण अहं रूप में अपने स्वरूपभूत शक्त्यात्मक विश्व का नित्य दर्शन कर रहे हैं। कारण उनका स्वरूप प्रकट है। शिवभाव निष्क्रिय तथा निराकार है एवं शक्तिभाव सक्रिय और साकार। परमस्वरूप में वे एक महाबिन्दु के रूप में नित्य विराज-मान है। महाबिन्दु में एक ही पूर्ण अखण्ड सत्ता विराजमान है। वह है—परम अद्वय। वह शिव होते हुए शक्ति एवं शक्ति होते हुए भी शिव हैं।

विश्व रचना समझने के लिए धीर और स्थिर रूप में महाबिन्दु के स्वरूप और कृत्य पर गौर करना आवश्यक है। यह महाबिन्दु ही शास्त्रों की पारि-भाषिक भाषानुसार कामरूपी परबिन्दु है। पारमार्थिक दृष्टि सम्पन्न ऋषियों ने इसे रवि अथवा आत्मारूपी सूर्य के नाम से जाना है। यही परमास्थिति का सांकेतिक निदर्शन है। यही सृष्टि, स्थिति, संहार का समन्वित नित्यरूप है। दो विरोधी शक्तियाँ परस्पर आकर्षण और विकर्षण कर रही हैं। इस आकर्षण

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

और विकर्षण की लीला में विश्व की सृष्टि और संहार की क्रियाएँ नित्य चल रही हैं। किन्तु इस खेल के अन्तर्गत स्थिति रूप, स्थिरबिन्दु नित्य अचलभाव से प्रतिष्ठित है। विरुद्ध दोनों बिन्दुओं में एक का नाम अग्नि और दूसरे का नाम सोम है। अग्नि तापस्वरूप है, इनका कार्य है—संहार करना अर्थात् फैली हुई शक्ति को बटोर लाना। यही अग्नि और सोम अनन्त प्रकार के विरुद्ध-शक्ति के प्रतीक स्वरूप एवं स्थितिबिन्दु, सविता, समस्त विरोधों का समन्वय स्वरूप है। एक ओर स्थितिबिन्दु नित्य स्थिति शील है, दूसरी ओर नित्य क्रियाबिन्दु अग्नि और सोमभाव को आश्रय बनाकर नित्य क्रिया करते चल रहे हैं, सृष्टि और संहार दोनों इनके अन्तर्गत हैं।

विभिन्न ऋषि और विभिन्न सिद्ध पुरुष अपने-अपने इष्टभाव के माध्यम से इस सृष्टि, स्थिति और संहार की क्रियाओं को समझने का प्रयत्न करते हैं एवं इस प्रसंग में बाहर से भीतर प्रवेश करने का एवं भीतर से बाहर आने का क्रम समझने की चेष्टा करते हैं। इस प्रकार विभिन्न चित्र यंत्र रूप में या चक्र रूप में तंत्र शास्त्र में प्रसिद्धि प्राप्त कर चुके हैं। प्रत्येक यंत्र के बाहर भूपुर एवं सभी के ऊर्ध्व में बिन्दु एक साधारण तथ्य है। विशेष क्षेत्र में तारतम्य हो सकता है और है भी, किन्तु यहाँ उनके बारे में कुछ कहने की आवश्यकता नहीं है। हम प्रस्तुत लेख में इस विश्वचक्र का जो विशिष्ट स्वरूप प्रसिद्ध है, उस सम्बन्ध में किंचित् चर्चा करेंगे। इसे श्रीचक्र कहा जाता है। यही श्रीमाता का यंत्र एवं विश्व रचना का एक प्रसिद्ध सांकेतिक प्रतीक है।

इस यंत्ररूपी श्रीमाता के मन्दिर में सभी रूपों में एवं सभी के ऊर्ध्व में बिन्दु या महाबिन्दु का स्थान है। यहीं से सृष्टि का प्रवाह निर्गत होता है एवं यह प्रवाह यहीं आकर शान्ति प्राप्त करता है। कहने की आवश्यकता नहीं कि हम महाबिन्दु के साम्यभाव को लक्ष्य करते हुए यह सब कह रहे हैं। यह महाबिन्दु निरन्तर स्थिर रहने पर भी निरन्तर गतिशील है। फलस्वरूप यह निस्पन्द होकर भी निरन्तर स्पन्दनमय है। इस महाबिन्दु में एक ओर जिस प्रकार दो विषम बिन्दुओं की क्रियाएँ हो रही हैं, दूसरी ओर उसी प्रकार एक समबिन्दु की क्रियाएँ नित्य चल रही हैं। इस दृष्टि से देखने पर एक बिन्दु ही तीन बिन्दुओं के रूप में कल्पित होता रहता है। इन तीन बिन्दुओं से तीन रेखाएँ उत्पन्न होती हैं। इन तीन रेखाओं के परस्पर संयोग से एक त्रिकोण उत्पन्न होता है। यही त्रिकोणधाम विश्वसृष्टि के योनि स्वरूप मातृमण्डल रूप में गृहीत होता है। इस तथ्य को जरा विस्तार के साथ कह रहा हूँ। वेदान्त-दर्शन में सूत्र है—"योनेः शरीरम्।" शरीर-रचना योनि के अधीन है। बिन्दु

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

और योनि के संघर्ष से व्यष्टि और समष्टि, समग्रविश्व क्रियाएँ निष्पन्न होती हैं। सृष्टि मूल की पर्यालोचना करने पर समझ में आता है कि इसकी मूलसत्ता एक ओर निरंश और दूसरी ओर सांश है। निरंश सत्ता स्पन्दहीन अथवा स्पन्दातीत, नित्य, शान्त है। वस्तुतः वही शिवभाव का या आत्मा का परमस्वरूप है। इसी निरंश सत्ता में शिवशक्ति दोनों हैं, किन्तु दोनों में कोई विलक्षणता नहीं है। कारण वहाँ एक ही सत्ता है। शैव उसे शिव कह सकते हैं, शाक्त उसे शक्ति कह सकते हैं। यह निरंश का क्षेत्र सर्वदा निरंश ही रहता है। यह मन, बुद्धि के निकट अगम्य है, फिर भी मन-बुद्धि की सभी क्रियाएँ इसके अधीन हैं। सांश भाग शिवभाव प्रधान या शक्तिभाव प्रधान हैं—यही दो भाव हैं। वास्तव में सत्य यह है कि दोनों शक्ति स्वरूप हैं, कारण दोनों ही सांश हैं। सांश सत्ता के शिव रूप को अम्बिका कहा जाता है एवं शक्ति रूप को शान्ता। दोनों ओर से धारा प्रवाहित होती है—अम्बिका की ओर से जिस प्रकार की धारा निकलती है, उसी प्रकार शान्ता की ओर से भी प्रवाहित होती है। त्रिकोण की अथवा योनि की रचना में यही धारागत वैशिष्ट्य विशेष कार्य करता है। स्मरण रखना होगा कि विश्व रचना के मूल में त्रिकोण का निर्माण होता है, त्रिकोण का निर्माण अत्यन्त रहस्यमय है। प्रत्येक धारा प्रवाह में जिस स्थिति का आविर्भाव होता है, उसका स्वरूपगत वैशिष्ट्य भी इन दोनों धाराओं का सम्मिलित वैशिष्ट्यमूलक है। उदाहरणस्वरूप कहा जा सकता है कि धाराओं का मूल स्थान अम्बिका और शान्ता हैं, इनका मिलन दोनों की सत्ता के समांश भी हो सकता है और विषमांश भी। तदनुसार सृष्टि में पार्थक्य होता रहता है। यहीं पीठ के निर्माण का गुप्त रहस्य निहित है। चार प्रकार के वाक्तत्त्व भी इस रहस्य के साथ संश्लिष्ट हैं। त्रिकोण का जो मध्यबिन्दु है, वही चरमपीठ है जिसे परावाक् के नाम से वर्णन किया जाता है। इसके साथ उनका घनिष्ठ सम्पर्क है।

श्रीमाता का मन्दिरात्मक यह श्रीचक्र एक ओर समष्टि अथवा महासमष्टि रूप विश्व है एवं दूसरी ओर व्यष्टि रूप मानव देह है, यह दोनों के साथ अभिन्न है, इसे स्मरण रखना होगा। पराशक्ति विश्वरूपिणी : यही उनकी इच्छात्मक अवस्था है। इसके अपर पृष्ठ पर उनका विश्वात्मक स्वरूप है। पराशक्ति विश्व रूप होने पर भी चक्ररूप में प्रकाशमान नहीं है, इसीलिए यह अस्फुरित विश्व है। स्फुरण होने पर यही इच्छाचक्र रूप धारण कर लेती है। पराशक्ति विमर्शरूपा है। जगत् का उद्गीरण और निगीरण उनकी स्वेच्छा का स्फुरण मात्र है। यह

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

जो विश्वचक्र की बातें बतायी गयीं, यह विन्दु से भूपुर तक विस्तृत है। सृष्टि का क्रम क्या है, अब उसे बताया जा रहा है।

सृष्टि से पूर्व कोई प्रपंच न रहने के कारण उसे शून्य कहा गया है, यह प्रकाशात्मक परमविश्व की स्थिति है। तांत्रिकों की सांकेतिक भाषा में इसका नाम है—बिन्दु, जिसका पहले अग्नि और सोम के सामरस्य के नाम से वर्णन किया गया है। इसकी अन्तिम अवस्था विसर्ग नाम से आख्यात होती है। सामरस्य रूप यही बिन्दु ही काम अथवा सूर्य है, यही शिवशक्ति का सम्मिलित रूप है। चिद्गमन चन्द्रिका और 'भानुजृम्भण' नाम से इसका निर्देश है। यही सामरस्यात्मक कामबिन्दु के दो रूप हैं। एक अग्निस्वरूप एवं दूसरा सोमस्वरूप। आगमों की सांकेतिक भाषा में एक का नाम "अ" एवं दूसरे का नाम "ह" है। अग्निबिन्दु रक्तस्वरूप एवं सोमबिन्दु शुक्लस्वरूप है। दोनों बिन्दुओं के संयोग से चित्कला या संवित् का आविर्भाव हुआ। यह संवित् और कुछ नहीं, प्रकाशरूपी अग्नि संवंधवशतः विमर्शरूपी चन्द्रविन्दु का स्राव है। अग्नि के स्पर्श से जिस प्रकार घृत गल जाता है, यह भी उसी प्रकार का है। इन दोनों बिन्दुओं के अन्तराल या मध्यावस्था से जो धारा निःसृत होती है, वही विमर्श शक्ति की लहरी है। सांकेतिक भाषा में इसे हार्धकला कहा गया है। जब कामकला रूप अक्षर इस हार्धकला के साथ युक्त होता है तब उस अक्षर से बैन्दव चक्र का अविर्भाव होता है।

बैन्दव चक्र तीन हैं, मातृका में समष्टि रूप अर्थात् पश्यन्ती, मध्यमा, और वैखरी की समष्टि। इसी चक्र से ३६ तत्त्वरूप विश्व उत्पन्न होता है। श्रीचक्र के अंकित स्वरूप में यह मध्य त्रिकोण के नाम से जाना जाता है। यह मातृका त्रय की समष्टि या सदाशिव या परमात्मा या तुरीय बिन्दु से उद्भूत है।

पराशक्ति परिस्फुट शिवशक्ति समापन्न बीज का अंकुर स्वरूप है। जब परमशिवरूपी सूर्य की किरणें विमर्शरूपी स्वच्छ दर्पण में प्रतिफलित होती है तब चित्त रूपी प्राचीर में महाविन्दु का आविर्भाव होता है। यह जो चित्त है, वह अहंकारात्मक एवं परिस्फुट अकार और हकार का सामरस्य स्वरूप है। रक्तवर्ण और श्वेतवर्ण दोनों बिन्दु वाक् और अर्थ के आभास को प्रकट करते हैं। अहंकारात्मक सूर्य या रवि दोनों के सामरस्यरूप है, इसीलिए कमनीय और कामपदवाच्य है। रवि की ये कलाएँ अग्नि और सोम के नाम से दो बिन्दुओं के रूप में परिचित हैं। यही कामकला विद्यादेवी का स्वरूप है। यदि चक्रक्रम को जान लिया जाय तो जगन्माता महात्रिपुर सुन्दरी की प्राप्ति होती है।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

कालचक्रादि तंत्रों में कामकला लिखने की विधि प्रदत्त हुई है। तदनुसार पहले एक बिन्दु का सन्निवेश आवश्यक है। उसके नीचे तिर्यक् भाव में अगल-बगल दो बिन्दुओं को बैठाना होगा। इन तीनों बिन्दुओं के नीचे हंसपद अंकित करना चाहिये। आचार्यों का कहना है—यहीं तक लिपि संभव है। इसके आगे जो कुछ है, यह लिपि के द्वारा लिखना असम्भव है। बाकी आनन्दस्वरूप है। कामकला की अभिव्यक्ति कामालय में होती है अर्थात् योनिस्थान में। यह आनन्द का द्योतक है। जब लिपिबद्ध किया जाता है तब उसे हंसपद के नाम से लिखा जाता है। भगवान् शंकराचार्य कामकला के जिस ध्यान को बता चुके हैं, उससे ज्ञात होता है कि सर्वप्रथम चिन्तनीय देवी का आनन, उसके नीचे दो कुच या स्तन, उसके नीचे कामकला तत्त्व ध्यान का विषय है। मुख बिन्दु ही कामबिन्दु है। कुचबिन्दु दो विमर्श विन्दु हैं। उसके नीचे जो कुछ है, वह हकारार्द्ध या अर्द्धनारीश्वर शिव का योनिस्थान है।

यह जो त्रिकोणात्मक बैन्दव चक्र है, तीन प्रकार का है। सृष्टि रूप में इसका स्वरूप शक्ति, किन्तु संहार रूप में इसका स्वरूप अग्नि है। यह चक्र ही क्रमशः नवयोनि चक्र रूप में परिणति प्राप्त करता है। नौ योनियों में चार आत्मस्वरूप (आत्मा, अन्तरात्मा, परमात्मा और ज्ञानात्मा) एक प्रमाता या जीव, एक प्रमेय या ग्राह्यवर्ग, एक ज्ञान एवं बाकी दोनों धर्म और अधर्म रूप कर्म संस्कार है। इसी मूल सत्ता का अवलम्बन करते हुए महाप्रलय के पश्चात् सृष्टि की अवतारणा होती है। नवयोनिचक्र का यही स्वरूप है, यही चिदानन्द घन के नाम से सर्व-शास्त्र में वर्णित है। इसमें एक ओर जहाँ चित् या चैतन्यकला है, दूसरी ओर उसी प्रकार विश्वाहन्ता का परिणाम आनन्द भी है। यह देश, काल और आकार के द्वारा अपरिच्छिन्न है, क्योंकि यही सब स्वरूपतः चिन्मय हैं। यह नवयोनिचक्र नौ प्रकार से विभक्त है। प्रत्येक चक्र में पृथक-पृथक मंत्रों का सम्बन्ध है। ये सब मंत्र चक्रेश्वरी, करशुद्धि के नाम से प्रसिद्ध है।

प्रथम चक्र अम्बिका के नाम से वर्णित होता है। यहाँ महाबिन्दुरूप सदाशिव आसन रूप में हैं। इस आसन पर अधिष्ठाता रूप में उपविष्ट है—शिवशक्ति का युगलस्वरूप। शिव को प्रलयाग्नि के नाम से वर्णन किया गया है। इस अग्नि में आदि तत्त्व शिव से अन्तिम तत्त्व पृथ्वी तक छत्तीसों तत्त्व अन्तर्लीन भाव में विद्यमान हैं। यह हुआ—अर्थ का स्वरूप। इस अग्नि को सभी वर्णों का आदि-भूत, अनाश्रित प्रकाशरूप समझना चाहिए। अर्थात् यह अकार है। जिसका चित्कला के नाम से वर्णन किया जाता है, वह विमर्शरूपा और सर्ववर्णों के

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

अन्तर्भुक्त हार्द्धकला है। तंत्र की सांकेतिक भाषा में कहा जाता है—"अहं" का "अ" कार आदिवर्ण प्रकाशरूप एवं हकार अन्त्यवर्ण विमर्शरूप है।

यह त्रिकोण महाविन्दु रूप मध्यचक्र से उद्भूत है जिसे शिवशक्ति के सामरस्य के नाम से वर्णन किया गया है। यह त्रिकोण ही अम्बिका है। इस त्रिकोण के तीनों कोण से तीन स्पन्दों का आविर्भाव होता है जिसके प्रभाव से अष्टकोणात्मक अष्टारचक्र आविर्भूत होता है। यह त्रिकोण अष्टार के केन्द्रस्थल में अवस्थित है एवं यह स्वरवर्णों द्वारा आच्छन्न है। त्रिकोण की तीनों रेखाएँ परस्पर समान एवं प्रत्येक रेखा पाँच स्वरवर्ण द्वारा आवृत हैं। अकार से पाँच स्वरवर्ण लेकर एक रेखा रचित होती है। इस प्रकार तीन रेखाएँ पन्द्रह स्वरवर्णों द्वारा रचित होती हैं जिसका अन्तिम स्वर बिन्दु नाम से परिचित है। त्रिकोण के केन्द्रस्थल में है—विसर्ग। यही त्रिकोण शास्त्रों में महात्रिकोण के नाम से प्रसिद्ध है।

यह पहले ही बताया जा चुका है कि यही त्रिकोण नौ चक्रों में परिणत होता है। त्रिपुरादि नव चक्रेश्वरी और करशुद्धि आदि मंत्रों के बारे में भी बताया जा चुका है। अम्बिका और शान्ता के सामरस्य रूप, सदाशिव रूप आसन यही है। कामेश्वर और कामेश्वरी द्वारा यह आसन अधिष्ठित है।

श्रीचक्र की अनेक प्रकार की वासनाएँ हैं जिनमें एक के बारे में यहाँ समझाने का प्रयत्न कर रहा हूँ। इस दृष्टि के अनुसार कल्पनाओं के स्तरों को इस रूप में ग्रहण करना पड़ेगा। यह कल्पना करना पड़ेगा कि एक अधः ऊर्ध्व सरल रेखामय विशाल नाड़ी फैली है। इसे सुषुम्ना नाड़ी कहा जाता है। इसका अन्तर शून्यात्मक है। इस नाड़ी के दोनों किनारे पर दो सहस्रदल शोभायमान हैं। जो ऊर्ध्व प्रान्त में है, वह श्वेतवर्ण है, जो सुषुम्ना के नीचे है, वह रक्तवर्ण है। नीचेवाला सहस्रार तंत्रशास्त्रों में अकुल शब्द के नाम से प्रसिद्ध है। ऊर्ध्व का सहस्रदल जो सुषुम्ना के ऊर्ध्व भाग में है, वह अधोमुख है एवं नीचे का सहस्रदल जो सुषुम्ना के मूलभाग में है, वह ऊर्ध्वमुखी है। अधः सहस्रार के ऊपर है—अष्टदल कमल, उसके ऊपर है—षड्दल कुलपद्म। इसका विशेष विवरण स्वच्छन्द तंत्र में प्राप्य है। प्रत्येक सहस्रदल में सभी शक्तियों का योग है। प्रत्येक कमल में कर्णिका या केशरादि विद्यमान है। ये दोनों सहस्रदल शाश्वत या नित्यसिद्ध हैं। दोनों सहस्रदलों के बीच स्थित सुषुम्ना को आश्रय करते हुए तीस आधार पद्म हैं, यह कहने की आवश्यकता नहीं कि सभी शक्ति स्वरूप हैं। नीचे से ऊर्ध्व संचार के मार्ग में प्रथम स्थान का नाम है कन्द। यह गुदा और लिंग के अन्तराल में स्थित है। कन्द स्थान पाँच अंगुल उच्च,

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

दो अंगुल विस्तार और एक अंगुल परिमाण है। इसी कन्द में त्रिकोणाकार महायोनि है। इस योनि के मध्य में जो नाड़ी स्थित है, उसका नाम है— सुषुम्ना। जिसके निम्न प्रदेश में अधःसहस्रार की बातें बतायी जा चुकी हैं। उसके कर्णिका प्रदेश में कुलदेवी स्थापित हैं, चारों ओर शक्ति का आवरण है। इसी पद्म के एक अंगुल ऊर्ध्व, सुषुम्ना में एक अष्टदल कमल है। इसमें आठ ग्रन्थियाँ हैं। इस कमल की कर्णिकादि सबकुछ रक्तवर्ण का है। इसके तीन शृंग हैं जो ग्रन्थि के आगे स्थित हैं। उसमें बहुशक्ति स्थित है। अष्टभैरव और वामादि शक्ति यहाँ विद्यमान हैं। इसमें षड्दल कुलपद्म विद्यमान हैं। यह कुलपद्म कौलशक्ति के द्वारा निरन्तर समाश्रित रहता है। यह कुलपद्म पूर्व पद्म के एक अंगुल ऊर्ध्व में अवस्थित है।

किसी-किसी के मन में प्रश्न उठता है कि अकुल पद्म कौन-सा है? कुछ लोग अष्टदल को ही अकुल पद्म समझते हुए ग्रहण करते हैं, किन्तु आचार्यगण इसे स्वीकार नहीं नहीं करते। उनका मत यह है कि सुषुम्ना स्थित तीस पद्म फूलों में जो व्यापक है, वही सहस्रदल वास्तव में अकुल है। इसी का नामान्तर विषुव है। वही सभी का आधार है। अकुल के बाद सर्वप्रधान स्थान वह्नि का है यह वह्नि बिम्ब मूलाधार का सूचक है। वह्नि के पश्चात् हृल्लेखा या शक्ति का स्थान निर्दिष्ट किया गया है। शक्ति के ऊर्ध्व में स्वाधिष्ठान या षड्दल कमल की अवस्थिति है। इसके ऊर्ध्व नाभिदेश में मणिपूर नामक दसदल कमल है। नाभि के ऊर्ध्व हृदयदेश में द्वादशदल अनाहत चक्र है। यह मणिपूर के ऊर्ध्व में स्थित है। इस चक्र में कालरात्रि आदि शक्ति की क्रियाओं का स्थान है। इसके बाद और भी ऊर्ध्व कण्ठदेश में षोडशदल विशुद्धचक्र स्थित है। विशुद्ध के ऊर्ध्व लम्बिकाग्र में एक अष्टदल कमल है। इसका आयत चार अंगुल हैं। इसके बाद भ्रूमध्य में द्विदल आज्ञाचक्र स्थित है।

आज्ञाचक्र के किंचिदूर्ध्व में बिन्दु का स्थान है। बिन्दु के किंचिदूर्ध्व में अर्द्धबिन्दु या अर्द्धचन्द्र प्रकाशमान है। इसके बाद क्रमशः रोधिनी, नाद, नादान्त, शक्ति, व्यापिका, समना और उन्मना हैं। उन्मना के बाद महाबिन्दु है। यही है परमस्थान एवं यही निष्कल रूप में गण्य होता है।

इन-सभी चक्रों में अकुल से आज्ञाचक्र तक चक्रों का विवरण विभिन्न योगशास्त्रों के ग्रन्थों में प्राप्य है, किन्तु आज्ञाचक्र के बाद से अर्थात् बिन्दु से महाबिन्दु तक सूक्ष्म और सूक्ष्मतर केन्द्रों का रहस्य साधारणतः सभी लोग नहीं जानते। यह जो सूक्ष्मता है, इसकी सूचना बिन्दु से प्राप्त होती है।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

अर्द्धमात्रा का क्रमिक संकोच रूप तंत्रशास्त्रों में प्रसिद्ध है। उन्मनी तक यह क्रमिक सूक्ष्मता की प्रगति है, ऐसा मानना चाहिए। वास्तव में उन्मनी में ही सूक्ष्मता का अवसान होता है। महाबिन्दु सकल, सकल-निष्कल दोनों भावों के अतीत है। यह महाबिन्दु ही विशुद्ध शून्य संविद की प्रतिष्ठा का स्थान है।

इस सूक्ष्म मार्ग का जो प्रथम स्थान है, उसका नाम है बिन्दु, यह पहले ही बताया जा चुका है। यह ललाट पर दीप के आकार का प्रतिभासित होता है। इसे अर्द्धमात्रा इसलिए कहा जाता है कि यहाँ उच्चारण के ह्रस्व स्वर के उच्चारणकाल का अर्द्ध है। यह जो बिन्दु का प्रकाश है, दीपवत् होने पर भी वृत्ताकार है। वास्तव में इसका प्रकाश कोटि सूर्यों के प्रकाश के अनुरूप है, इसमें सन्देह नहीं। इस विन्दु के केन्द्र में या कर्णिका में शान्त्यातीत ईश्वर अधिष्ठित है, उन्हें चारों ओर से वेष्ठन करती हुई निवृत्ति आदि चार कलाएं विराजमान है। इसके बायी ओर है—शान्त्यातीत की निज शक्ति। बिन्दु के बाद अर्द्धचन्द्र का स्थान है। इसका उच्चारणकाल १।४ मात्रा है। अर्द्ध चन्द्र के ऊपर ज्योत्सना, ज्योत्सनावती आदि शक्ति समन्विज्ञ रोधिनी का स्थान है। रोधिनी, रुन्धिनी आदि नाम से भी इन सभी शक्तियों का परिचय प्राप्त है। ब्रह्मादि ईश्वर या सिद्धवर्ग जिससे परतत्त्व प्राप्त न कर सके, इसीलिए उनके गतिरोध के लिए इन सभी कलाओं की प्रतिष्ठा हुई है। रोधिनी त्रिकोण के आकार की विशिष्टता है।

अर्द्धमात्रा प्रसंग में जिस काल विभाग का आभास दिया गया, उसका तात्पर्य समझने के लिए काल का परमाणु सम्बन्धी ज्ञान होना आवश्यक है। तांत्रिकों और दार्शनिकों का कहना है कि काल का परमाणु है। ह्रस्व स्वर के उच्चारण का काल १ मात्रा है। इसे २५६ भाग में विभक्त करने पर जो कालांश प्राप्त होता है, उसे काल का परमाणु कहा जाता है। उसका पारिमाणिक नाम है—लव।

रोधिनी के बारे में पहले कह चुका हूँ। इसके बाद नाद का उल्लेख आवश्यक है। इसका आकार विन्दु द्वय के मध्यगत सरल रेखा रूप हैं। नाद के बाद नादान्त का स्थान एवं इसके बाद शक्ति। यह शक्ति ही सभी भुवनों का आधार है। यह चारों ओर स्थित सूक्ष्मा, सुसूक्ष्मा, अमृता और मृता इन चारों धाराओं का मध्यस्थ है। यही व्यापिनी या व्यापिका है। व्यापिका बिन्दुयुक्त त्रिकोण के आकार में प्रकाशमान होती है। दो बिन्दुओं के अन्तरालस्थ सरल रेखा ही समना है। बिन्दुयुक्त सरल रेखा उन्मना है।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

शक्ति आदि का स्वरूप द्वादश सूर्यों की नाई उज्जवल है। इसके बाद मनोन्मनी और उसके के पश्चात् है उन्मनी।

उन्मनी के ऊर्ध्व में अर्थात् हकार से आरम्भ कर सकल, सकल-निष्कल और केवल निष्कल इन तीनों अवस्थाओं के ऊर्ध्व में देश और काल के द्वारा अनवच्छिन्न परमरमणीय जो स्थिति है वह स्वभावतः सुन्दर एवं परमानन्द-स्वरूप के आविर्भाव का स्थान है।

यह परमानन्द परप्रकाशात्मक परा और शिव का सामरस्यमय है। यह विमर्श शक्ति की स्वरूपभूता महात्रिपुर की सुन्दरी है।

इस स्थान पर उपनीत होने के लिए क्रमशः ऊर्ध्व में उत्थान करना पड़ता है एवं इस उत्थान के साथ-साथ कालभेद हो जाता है। जो सब वर्ण मंत्रों में अन्तर्भुक्त है, उनकी मात्राएं क्रमशः क्षीण होते-होते यहीं से ऊर्ध्व-गति आरम्भ होती है। हकार से बिन्दु तक जितने वर्ण हैं, वे सब स्थूल हैं। उनके उच्चारण के बारे में मात्रा शब्द व्यवहृत होता हैं। बिन्दु से समना तक वर्णों की मात्रा अर्द्धमात्रा अर्थात् उसकी अर्द्धमात्रा, आदि। समना के ऊर्ध्व में अर्द्धादि क्रम को अवलम्बन करते हुए लव तक उच्चारण काल है। यही सूक्ष्मतत्त्वकाल है। इसकी अपेक्षा सूक्ष्मतर कालांश कल्पनीय नहीं है। इसके ऊर्ध्व में अर्थात् लव के ऊर्ध्व भाग में शून्य ही शून्य है—यह कालातीत है। इस शून्य को भेद कर लेने पर आत्मा का विश्वभाव व्यक्त होता है। स्मरण रखना होगा कि अर्द्धचन्द्र के ऊपर रोधिनी और नाद हैं, नादान्त के ऊपर चित्शक्ति, व्यापिका और समना विद्यमान हैं। पहले कहा जा चुका है कि महात्रिपुर सुन्दरीरूपा विमर्श शक्ति जगदम्बा हकार से प्रारम्भ कर महा-बिन्दु तक विभक्त तीन भाग के ऊर्ध्व में स्थित हैं। यही जगन्माता महाशक्ति प्रत्येक जीव की निजनिज आत्म स्वरूप हैं।

स्मरण रखना होगा कि विमर्श शक्ति जब आत्मा या परमशिव का स्फुरण अर्थात् पश्यन्त्यादि क्रम से बैखरी तक देखने की इच्छा करती है तब वह शान्ता रूप में स्थित होकर अम्बिका रूप धारण करती हैं अर्थात् प्रकाशांश रूप अम्बिका के साथ सामरस्य प्राप्त करता है। इस अवस्था में उनका नाम परावाक् होता है। इस समय विश्व बीजरूप में अवस्थित रहता है। इसी परावाक् के भीतर ३६ तत्त्वरूपी विश्व अव्यक्त भाव में अवस्थित रहता है। जब इस बीज रूप विश्व को अभिव्यक्त अथवा प्रस्फुटित करने के लिए वे उन्मुख अथवा उत्सुक होती हैं, तब वे वामा नाम धारण करते

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

हुए अन्तर्निहित विश्व को बाहर प्रकाशित करती हैं अर्थात् उत्पादन करती हैं। आत्मा की ओर से बाहर प्रकाश होने के कारण इसका नाम है—वमन। तब इस वामा त्रिकोण की वामरेखा अभिव्यंजन करती है। यही रेखा सृष्टि रेखा है। वामा शक्ति के साथ इच्छाशक्ति सामरस्य प्राप्त करते हुए पश्यन्ती रूप में अवस्थान करती हैं। इधर ज्ञानशक्ति ज्येष्ठा रूप में प्रकट होती है। वामा विश्व सृष्टि की सूचना देती है, किन्तु ज्येष्ठा विश्व स्थिति की सूचना देती है। यह सरल रेखारूप में है। ज्येष्ठा शक्ति ज्ञानशक्ति के साथ सामरस्य प्राप्त करती है। यही विश्व की स्थिति का प्रतीक है। यही त्रिकोण की अग्ररेखा है। इसके बाद क्रिया शक्ति की अभिव्यक्ति होती है। ऋजुरेखामयी मध्यमावाक् मध्यमामातृका के नाम से प्रसिद्ध है। इसके बाद अर्थात् विश्व की सृष्टि और स्थिति के पश्चात् विश्व का संहार प्रदर्शित होता है। संहार-काल में बैन्दवरूप धारण करते हुए अम्बिका और शान्ता सामरस्य रूप में स्थित होते हुए मध्यबिन्दु से आविर्भूत होने के बाद संहारोन्मुख होकर पुनः बिन्दु में प्रवेश करती हैं। पत्यावर्त्तन क्रम में इसे रौद्री और क्रिया-शक्ति का सामरस्य समझना चाहिए। यह त्रिकोण की दक्षिण रेखा है। वैखरीवाक् विश्वविग्रह यह शास्त्रों में उक्त हुआ है।

अब तक जो कुछ बताया गया, वह सब अम्बिका आदि की चार शक्तियाँ एवं शान्ता आदि चार शक्तियों के त्रिकोण रूप धारण का रहस्य है। ये सब शक्तियां प्रकाश और विमर्श की अंशरूप हैं, यह पहले ही बताया जा चुका है।

त्रिकोग के अन्तर्गत योगी के लिए विशेष रूप में अनुसंधान के चार विषय है—प्रथम पीठ, द्वितीय लिंग, तृतीय वर्ण और चतुर्थ अवस्था। यह जो चार शक्तियाँ प्रकाश और विमर्श के अंशरूप अम्बिकादि और शान्तादि नाम से ज्ञात है, ये ही पहले त्रिकोण रूप धारण करती है। इसके बाद उस त्रिकोण में पीठादि का उदय होता है। स्मरण रखना होगा कि शिव से पृथ्वी तक ३६ तत्त्व ही नामरूपात्मक हैं। यह सब स्वरूप में, बीज रूप में और बाहर सृष्टि रूप में भासमान होता है। ये चारों शक्तियाँ क्रमशः सामरस्य प्राप्त करते हुए चार पीठों में प्रकट होती है। प्रथम पीठ कामरूप, द्वितीय पूर्णगिरि, तृतीय जालन्धर और चतुर्थ औड्यान पीठ। इन चारों शक्तियों की सामरस्य अवस्था पीठ के नाम से प्रसिद्ध है। इन सभी पीठों के स्थान मानव देह के भिन्न-भिन्न प्रदेश में है, इसे जानना पड़ेगा। कामरूप

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

पीठ का स्थान सुषुम्ना के मूल में स्थित कन्दभूमि में है। कन्दस्थित पिण्ड कुण्डलिनी नाम्नी शक्ति में लक्षित होता है। यही कुण्डलिनी-शक्ति, ज्ञान और क्रिया दोनों रूपों में है। इसे साक्षात् परमेश्वरी कहा जाता है। यह प्रसुप्त भुजंगम की तरह रूप विशिष्ट है। यह मातृकारूपिणी है। साधक वायु का कन्दमूल में संचालन करते हैं। कन्द के पश्चात् द्वितीय स्थान का नाम है—पद। इसका नामान्तर हंस है। यह द्वितीय पीठ है। तृतीय पीठ का नाम रूप अथवा विन्दु है। चतुर्थ पीठ का नाम रूपातीत है। यही निरंजन तत्त्व का वाचक है। रूपातीत वास्तव में चिन्मय सत्ता का ही स्वरूप है। इन चारों पीठों का स्थान भी चार है। पिण्ड का स्थान मूलाधार, पद का स्थान हृदय, रूप का स्थान भ्रू-मध्य और रूपातीत का स्थान ब्रह्मरन्ध्र में है। पीठों के आकार भिन्न-भिन्न है। प्रथम पृथ्वी रूप में, द्वितीय वायु रूप में, तृतीय जल रूप में एवं चतुर्थ तेजो रूप में है। प्रथम पीठ भूतत्त्व है। आगम मत से भूतत्त्व चतुरस्र है, इसे स्मरण रखना होगा। द्वितीय पीठ विन्दुओं से युक्त वायुमण्डल है। यही पूर्णगिरि है। वायुमण्डल में छः आवर्त हैं। तृतीय पीठ अर्द्धचन्द्राकार हैं। जालन्धर इस पीठ का नाम है। यह जलतत्व का मण्डल है। जलतत्व अर्द्धचन्द्राकार है, यह बात प्रसिद्ध है। चतुर्थ पीठ औड्यान। इसका आधार त्रिकोण है। यह अग्नि मण्डल का स्वरूप है। ये चारों पीठ प्रकारान्तर से चार भूतों के वाचक है। आकाश तत्व का रूप नहीं है, इसलिए उसका उल्लेख नहीं किया गया। पीठों का वर्ण क्रमशः पीत, धूम्र, श्वेत और रक्त है। पीठों का वह क्रम आम्नाय सम्मत है। प्रत्येक पीठ में एक-एक लिंग हैं। पीठ भेदानुसार लिंगों के नाम भिन्न-भिन्न हैं। कामरूप के लिंग का नाम स्वयंभू, पूर्णगिरि के लिंग का बाण, जालन्धर के लिंग का इतर और औड्यान पीठ के लिंग का नाम परलिंग है। स्वयंभू लिंग का वर्णसुवर्ण की भाँति है, बाण लिंग का वर्ण रक्त की भाँति है, इतर लिंग का वर्ण पुष्प की तरह और परलिंग का वर्ण शुभ्र है।

लिंग शब्द का क्या अर्थ है? इस प्रश्न के उत्तर में आगम का कहना है कि जो लीन सत्ता को प्रकट करते हैं: लीनं गमयति: वही लिंग है। अर्थात् बाह्य इन्द्रियों के लिए अगोचर पदार्थों को अभिव्यक्ति करनेवाले को लिंग कहा जाता है। कामरूपादि पीठ चित् की स्फुरता का आधार है, इसलिए उपासना का प्रकृष्ट स्थान है। ये पीठ देहदृष्टि से मन, बुद्धि, चित्त और अहंकार इन चारों अन्तःकरण के चार रूप हैं। इनमें लिंग रूप में

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

चित्सत्ता की भिन्न-भिन्न अभिव्यक्ति होती है और ये स्वयंभू इत्यादि के नाम से वर्णित होते हैं। इस संबन्ध में अधिक चर्चा करना अनावश्यक है।

अब हम स्थूल दृष्टि से श्रीचक्र के स्तरों का वर्णन करेंगे। पहली बात तो यह है कि यह चक्र विन्दु-चक्र के नाम से प्रसिद्ध है। यह शिव भाव का द्योतक है। भैरवयामल में लिखा है कि यही परमेश्वरी सर्वातीता होने पर भी शिवसम्पृक्त होकर वैन्दव अवस्था में विराजमान हैं। विन्दु को शिव-शक्ति की घनीभूत अवस्था मान लेना पड़ेगा। इसके बाद त्रिकोणचक्र का स्थान है। इस प्रसंग में यह स्मरण रखना होगा कि अर्थरूपा जागतिक सृष्टि शब्दमूलक है। प्रलयकाल में समग्र सृष्टि शब्द-ब्रह्मरूप परावाक् में आकर विलीन हो जाती है। इसी परावाक् या मूल-विन्दु से पश्यन्त्यादि तीन वाकों का उद्भव होता है। तृतीय चक्र अष्टार के नाम से प्रसिद्ध है। किसी-किसी का ख्याल है कि शिव चतुरस्र और जीव चतुरस्र के मिलने से अष्टकोण उद्भूत होता है। शुद्धविद्या, ईश्वर, सदाशिव और शिवतत्त्व ये चारों एक साथ शिवचतुरस्र नाम से प्रसिद्ध हैं। तद्रूप माया, माया से उद्भूत तीन अन्तःकरण एक साथ मिलकर जीवचतुरस्र नाम से प्रसिद्धि प्राप्त कर चुके हैं। इन दोनों के मिलने से अष्टकोण या अष्टार उद्भूत होता है। यह शिव जीव भाव के सम्पादक हैं। अर्थसृष्टि की ओर से यह कहा गया। किन्तु अर्थ का वाचक शब्द सृष्टि का भी तो है। तदनुसार 'य' वर्ग अर्थात् य र ल व यह जीव चतुरस्र एवं 'श' वर्ग अर्थात् श ष स ह ये चारों शिव चतुरस्र हैं। इस स्थान पर 'आठ योनि' अभिव्यक्त होती है। इनमें चार शिव भाव के और चार जीव भाव के व्यंजक हैं। अष्टार की आठ योनि और मूल त्रिकोण की एक योनि एक साथ नव-योनि के नाम से प्रसिद्ध हैं। इसके साथ मध्य विन्दु का योग होने पर कुल संख्या दस हो जाती है। यह अत्यन्त गुह्य तत्त्व है, कारण यहाँ शिव और जीव का चतुरस्र है, मध्य त्रिकोणरूप एक योनि है, साथ में मध्यविन्दु युक्त है। इसीलिए प्रधान देवता की पूजा अष्टार में करने की विधि है। इसकी मुख्य देवता महात्रिपुरसुन्दरी है—शिव और जीव दोनों ही उनके अंग हैं।

विन्दु, त्रिकोण और अष्टार ये तीनों चक्र एक साथ प्रमातृपुर, स्वप्न-वासना और अग्निखण्ड के नाम से परिचित हैं। किसी-किसी आचार्य के मत से ये तीनों चक्र सृष्टिचक्र हैं। इनमें बिन्दु-चक्र सृष्टि-सृष्टि अर्थात् इच्छारूप, त्रिकोण चक्र सृष्टि-स्थिति या ज्ञानरूप, और अष्टार चक्र सृष्टि-संहार अथवा

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

क्रियारूप है। इन तीनों चक्रों के नाम सदानन्दमय, सर्वसिद्धिप्रदायक और सर्वरक्षाकर हैं। यहाँ आश्रय हुए कामेश्वर और आश्रयी हुई कामेश्वरी। दोनों के मिलने से चार आयुध उत्पन्न होकर अष्टार में अवस्थान करते हैं। चारों आयुध हैं—पाश, अंकुश, धनुष और बाण। वामादित्रय और इच्छादित्रय तीन प्रकारों में विभक्त होकर दो वह्नि और एक शक्ति के संयोग में अष्टार चक्र की रचना करते हैं। इस अष्टार चक्र में वह्नि और शक्ति रूप में नवचक्रात्मक रूप होता है। कामेश्वर और कामेश्वरी के तेज अपने सूक्ष्म पुर्यष्टक में विभक्त होते हुए वशिनी प्रभृति अष्टार के देवता रूप धारण करते हैं।

अब तक की गयी चर्चा से क्या समझा गया? यह समझा गया कि शिव शक्तितत्त्वादि घटक शुद्ध विद्यादि चारों तत्त्वों एवं जीवभाव का सम्पादक मायादि कंचुकमूल दस तत्त्व और मूल अक्षर दस—य र ल व श ष स ह क्ष और म का प्रादुर्भाव होता है। इन सभी चर्चाओं का सारांश यह है कि श्रीचक्र का यही अंश का कारण शरीर की सृष्टि रहस्य है। अब लिंग शरीर की सृष्टि को समझना चाहिए।

अब अन्तर्दशार और बहिर्दशार इन दोनों चक्रों की चर्चा की जा रही है। ऊपर शिव और शक्ति रूप जो दोनों तेज वशिनी प्रभृति रूप में या पुर्यष्टक रूप में स्थित रहे, वही तेज इस समय अन्तर्दशार के इन्द्रिय रूप में विभक्त हुए। इनकी पूजा होती है सर्वज्ञादि दस देवता के रूप में। यह सर्व रक्षाकर चक्र है, क्योंकि दस इन्द्रियों का रक्षाकारक हैं।

यह हुआ बहिर्दशार का उक्त दस इन्द्रियों का दस विषय—गन्धरसादि और वचन आदानादि लेकर यह चक्र सर्वार्थसाधक चक्र के नाम से प्रसिद्ध है। यहाँ सर्वसिद्धीप्रद देवता की पूजा होती है। यह पूर्वोक्त दोनों तेजों का नाम मात्र है। इस बहिर्दशार के चारों विदिक् कोणों में चार मर्मस्थान हैं। इनमें चार त्रिकोणों की भावना होती है। इन चारों त्रिकोणों के द्वारा घटित एक चतुरस्र कल्पित होता है जिसके चारों कोणों में प्रकृति अहंकार, बुद्धि और मन कल्पित होते हैं। इनकी वाचक चार मातृकाएँ—प फ ब भ। म कार जीव रूप त्रिकोण के साथ संश्लिष्ट है। अन्तर्दशार के वाचक वर्णों के नाम ट वर्ग और त वर्ग अर्थात् (ट ठ ड ढ ण, त थ द ध न), बहिर्दशार के वाचक मन्त्र क वर्ग और च वर्ग (क ख ग घ ङ, च छ ज झ ञ) हैं। यही हैं दो दशारों के बीस कोणों में रहनेवाले। चतुरस्र के चार बीज कुल

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

चौबीस वर्ण होते हैं। इन चौबीस वर्णों में दो-दो वर्णों के संयोग से एक ओर होता है ग्राह्य एवं दूसरी ओर ग्राहक।

इस तरह सूर्य की द्वादश कलाएँ व्यक्त होती हैं। प+फ=प्रकृति, ब+भ =मन। ये सब चतुरस्र की प्रधान कलाएं हैं। यही चतुरस्र हैं—विश्व चक्र। शेष दस कलाएं हैं—इन्द्रिय। तन्मात्रा रूप अवयव कला है। इसलिए दो दशार और चतुरस्र मिलकर सौरखण्ड बने। यह है प्रमाणपुर और जागरात्मक।

जबतक अन्तर्दशार के तत्त्व या विषय बहिर्दशार के या इण्द्रिय के तत्त्वों को अपनी व्याप्ति द्वारा आच्छन्न नहीं कर लेते अर्थात् जब विषय अपने-अपने अभ्यन्तर रूप में विलिन रहते हैं तब दसों इन्द्रिय और शब्दस्पर्शादि पांच और पांच अदृष्ट, इसके बाद मन और पुरुष इन सत्रहों तत्त्वों से लिंग शरीर की रचना होती है।

मूल कारण रूप सूक्ष्म बिन्दु अव्यक्त क्रमशः बाह्य रूप में विकसित होकर इन्द्रियादि भाव ग्रहण करता है और लिंग शरीर की रचना होती है। इसी तरह अन्त्यावयवी तन की रचना होती है एवं बाह्य रूप में परिणत होकर स्थूल शरीर की रचना होती है। इन सभी अवस्थाओं की सूचना चतुरस्रगर्भित दो दशारों में दृष्ट होती है। स्थूल शरीर के द्वारा जगत् व्यवहार के सम्पादक सूर्य है, कारण इसमें जड़ और अजड़ दोनों का समावेश है।

जड़ से मतलब है चन्द्रकला एवं अजड़ का मतलब है वह्निकला। जाग्रत पुरुष उक्त प्रकार त्रिचक्र, इन्द्रिय और विषय (चेतन और जड़) दोनों का सम्मिश्रण है। यह हुआ दोनों दशारों का परिवेश।

इसके बाद शिवशक्ति युगल तेज चौदह शक्ति रूपों में परिणत होता है। इसका नाम होता है संक्षोभिनी आदि। ये शक्ति समूह चतुर्दशार के चतुर्दश कोणों में अवस्थित है। उसी स्थान पर इनकी पूजा होती है। ये चौदहो तेज पिण्डाण्ड की दस इन्द्रियाँ है एवं मन, बुद्धि, चित्त और अहंकार है। इन चतुर्दशार के चान्द्रखण्ड और जड़ है। इसका नाम है सुषुप्तिपुर। चन्द्र की सोलह कलाएं प्रसिद्ध हैं। उनमें अ से ओ तक चौदह कलाएं हैं। अं एवम् अः—इन दोनों का संयोग होने पर षोडश पूर्ण होता है। इसी को षोडश कलाएं कहते हैं। बिन्दु से चतुर्दशार तक श्रीचक्र मुख्य है।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

अब अष्टदल षोडशदल और भूपुर की बातें बता रहा हूँ। इस सम्बन्ध में स्मरण रखना होगा कि समस्त चक्र बिन्दु रूप में है। बिन्दु में ही शक्ति के प्रभाव में चतुर्दशार तक कल्पित होता है। त्रिकोण से चतुर्दशार तक शक्ति चक्र है—इन सभी के गर्भ में शिवचक्र भी है। चतुर्दशार के बाहर है कमल, उसमें आठ देवियों की पूजा होती है। वस्तुतः ये आठ देवियाँ शिव शक्ति का अष्टधा विभक्त रूप हैं। यह सर्वसंक्षोभक चक्र है। क्षोभ सृष्टिकारक है, यह स्मरण रखना होगा। यह अष्टदल कमल के अन्तर्गत है, इसलिए अग्निखण्ड और—प्रमातृपुर है। बिन्दुरूप एक ही वह्नि की आठ कलाएं है। विसर्ग या चतुर्दशार के बाहर स्थित बिन्दु अष्टदल के अष्टार चक्र के अन्तर्भुक्त है, इसलिए चतुर्दशार का मध्यस्थ हो जाता है। भैरवयामल में कहा गया है कि चार शिवचक्र और शक्ति चक्र द्वारा श्रीचक्र की रचना होती है। यथार्थ श्रीचक्र शिवशक्ति का सम्पुट है। चतुर्दशार तक नवचक्रो का अन्तर्भाव समझना चाहिए। नवचक्रों में शक्तिचक्र पांच अर्थात् त्रिकोण, अष्टकोण, अन्तर्दशार, बहिर्दशार और—चतुरस्र। शिवचक्र चार हैं—बिन्दु, अष्टदल, षोड़शदल और चतुरस्र। त्रिकोण में बिन्दु, अष्टार में अष्टदल, दो दशारों में षोड़शार एवं चतुर्दशार में चतुरस्र अन्तर्भुक्त हैं। सर्वत्र ही शिवशक्ति का अविनाभाव स्पष्ट है। जो इसे जानता है, वह वास्तव में चक्रज्ञ है। इसलिए कोई-कोई सोचता है कि शिवचक्र को चतुर्दशार के बाहर लिखना बिडम्बना मात्र है।

(श्री विश्व नाथ मुखर्जी द्वारा बांग्ला से अनूदित)

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

चण्डीदास का श्री मंदिर

सदा कहते हो तत्व-तत्व कितने तत्व सुनो।
चौबिस तत्त्वो से होता देह का निर्माण ॥
किंवा कारिकर के आजा कारिकुरि।
उसमे रखो है छः पद्म वन्द पड़े हैं ॥
सहस्रार में होता पद्म सहस्रक दल।
उसके नीचे मणिपुर परमशिव का स्थल।
नासामूल मे द्विदल पद्म खंजनाक्षि
कण्ठ मे षोड़श दल पद्म बाँध रखि।
हृत्पद्म निर्मित है शतदल से
कुल कुण्डलिनी दशदल होता नाभिमूल में।
नामि के निम्न भाग में प्रेम सरोवर।
अष्टदल होता उसके भीतर।
उसके ऊपर नाड़ी होती सार्द्ध तीन कोटि
स्थूल सूक्ष्म वत्तीस तारा या परिपाटी।
लिंगमूल में षड़दलाम्बुज नियोजित।
गुह्यमूल में चतुर्दल पद्म विराजित ॥
यही अष्टदल देह में है
मतान्तर से इसे हृत्पद्म द्वादश कहते हैं।
सहस्रदल अष्टदल देह में नहीं है।
ये दोनों नित्य वस्तु के आधार हैं।
षट्चक्र का मूल मृणाल होता मेरुदण्ड
शिरसि तक वह भेद करता अण्ड
दण्ड दोनों के पार्श्व में इड़ा पिंगला हैं।
मध्यस्थित सुषुम्ना सदा प्रबल है ॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

मूलचक्र होता हंसयोग का आधार ।
अष्टदल चक्र में लीला का संचार ।।
द्विदल चक्र मैं रहता अमृत निर्भल ।
और पंच चक्र में पंच-वायु का संचार ।।
प्राण, आपान, व्यान, उदान, समान ।
कण्ठाम्बुजावधि चतुर्दल में अवस्थान ।।
कण्ठ पर उदान हृदति में बहे प्राण ।
नाड़ी के भीतर समान करता समाधान
चतुर्दल में अपान सर्वभूतों मैं व्यान ।
मुख्य अनुलोम विलोम सकल प्रधान ।।
अजपा नाम से तारा कुंभक रेचक ।
अनुलोमा उर्द्धरेता विलोम प्रवर्त्तक ।।
प्रवर्त्त साधक हृदनाभिपद्म के आश्रय में है ।
सिद्धार्थ सहस्रार में निश्चय है ।
रति स्थिर प्रेम-सरोवर अष्टदल में
साधना का यही मूल है, चण्डीदास कीदृष्टि में ।।

(श्री विश्वनाथ मुखर्जी महाशय द्वारा अनूदित)

•

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

॥ श्री ॥

सृष्टि का रहस्य

जन्मस्थितिविनाशानां कर्तारं मनसा स्मरम् ।
जगज्जन्मादिसम्बन्धे यत् किञ्चिद् विलिखाम्यहम् ॥

जब से मनुष्य गम्भीर विषयों में चिन्ता करने लगा उसके चिन्तनों का एक विषय हुआ यह जगत् कहाँ से आया है। पाश्चात्यों का कहना है कि विस्मय से दर्शनशास्त्र की उत्पत्ति हुई। शिशुओं में विस्मय की भावना बहुत प्रबल होती है। मानव सभ्यता के शैशव से ही जगत् के रहस्यों के विषय में खोज होती चली आ रही है। वेदादि शास्त्र सभ्यता की विशेष उन्नत अवस्था की रचनाएं है। उन शास्त्रों में भी सृष्टि के रहस्य के विषय में पर्याप्त विवेचन है।

सब से प्रथम चर्चा ऋग्वेद संहिता के प्रसिद्ध नासदीय सूक्त (१०।१२९) में पाई जाती है। उस सूक्त की कई ऋचाएं अनुवाद के सहित उद्धृत करता हूँ :—

नासदासीन्नो सदासीत्तदानीं
नासीद्रजो नो व्योमा परो यत् ।
किमावरीवः कुह कस्य शर्मन्नम्भः
किमासीद् गहनं गभीरम् ॥ १ ॥

न मृत्युरासीद् अमृतं न तर्हि
न रात्रया अह्न आसीत् प्रकेतः ।
आनीदवातं स्वधया तदेकं
तस्माद्धान्यन्न परः किं चनास ॥ २ ॥

तम आसीत्तमसा गूळ्हमग्रे
अप्रकेतं सलिलं सर्वमा इदम् ।
तुच्छ्येनाभ्वपिहितं यदासीत्त
तपसस्तन्महिना जायतैकम् ॥ ३ ॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

कामस्तदग्रे समवर्तताधि
मनसो रेतः प्रथमं यदासीत् ।
सतो बन्धुमसति निरविन्दन्
हृदि प्रतीष्या कवयो मनीषा ॥ ४ ॥

तिरश्चीनो विततो रश्मिरेषामधः स्विदासीदुपरि स्विदासीत् ।
रेतोधा आसन्महिमान आसन्त्स्वधा अवस्तात्प्रयतिः परस्तात् ॥५॥

को अद्धा वेद क इह प्रवोचत्
कुत आजाता कुत इयं विसृष्टिः ।
अर्वाग देवा अस्य विसर्जनेन
अथा को वेद यत आबभूव ॥ ६ ॥

इयं विसृष्टिर्यत आ बभूव,
यदि वादधे यदि वा न ।
यो अस्याध्यक्षः परमे व्योमन्त्सो
अंगवेद यदित्रा न वेद ॥ ७ ॥

उस समय (सृष्टि के पूर्व) न सत् था न असत् था। न अन्तरिक्ष (वायु लोक) था, न दूर में स्थिर आकाश था। किस वस्तु ने विश्व को ढक रखा था? यह कहाँ था, किसके आश्रय में? क्या अथाह गंभीर जलराशि थी? ॥ १ ॥

उस समय मृत्यु नहीं थी, (अतः) अमरत्व भी नहीं था। रात्रि अथवा दिन की पहचान न थी। परन्तु वह (परमेश्वर) अपनी शक्ति से बिना वायु के साँस ले रहा था। (अर्थात् विद्यमान था)। उसको छोड़कर और कुछ नहीं था। ॥ २ ॥

उस आदि काल में अन्धकार अंधकार से ढका था। सम्पूर्ण जगत् अज्ञात, जलस्वरूप था। जन्म लेनेवाला संसार अनिर्वचनीय दशा में जब ढका हुआ था, अपनी तपस्या की महिमा से एक (विराटः पुरुष ?) उत्पन्न हुआ ॥ ३ ॥

उस पुरुष से उस समय कामना निकल आई, जिसके कारण मन में सृष्टि की शक्ति सबके पूर्व उत्पन्न हुई। ज्ञानियों ने अपनी बोधशक्ति के द्वारा अपने अन्दर ढूंढ कर असत् (अविद्यमान) और सत् (विद्यमान) का सम्बन्ध (असत् में सत् अव्यक्त रूप में वर्तमान है इस तत्व को) समझ लिया ॥ ४ ॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

कौन निश्चय से जानता है, कौन यहाँ बतलायगा, यह संसार कहाँ से उत्पन्न हुआ, यह सृष्टि कहाँ से हुई देवता लोग (इसका उत्तर) जानते हों, परन्तु वे तो जगत् सृष्टि के पश्चात् उत्पन्न हुए। अब कौन जानता है, यह कहाँ से आया ? ॥ ५ ॥

'यह सृष्टि कहाँ से आई', 'किसी ने इसका विश्वास किया अथवा नहीं', इन प्रश्नों का उत्तर दे सकता है वह जो उच्चतम स्वर्ग में स्थित हो कर इस जगत् की चालना कर रहा है। अथवा वह भी इस रहस्य को नहीं जानता है ॥ ६ ॥

ये ऋचाएं बड़े कौशल से इस बात को समझाती हैं कि सृष्टि का रहस्य अत्यन्त गंभीर है। इस विषय में जब कोई विचार करना चाहता है, उसकी बुद्धि बार-बार रुक जाती है। इस रोक को समझाने के लिये ऋचाओं में दीर्घ स्वरों का ऐसा विन्यास किया गया कि पढ़ते समय वाणी बार बार बाधा पाती है। इस प्रसंग में एक अंग्रेजी उक्ति 'साउंड एकोईंग दी सेंस' (शब्द अर्थ की प्रतिध्वनि कर रहा है) याद आती है।

छान्दोग्य उपनिषद् में सृष्टि के विषय में हम भावरूप विवरण पाते है। आरुणि अपने पुत्र श्वेतकेतु को वह ज्ञान दे रहा है जिसके जानने से सब वस्तुएं विदित हो जाती है। पिता कहता है---

'सदेव सौम्य इदमग्र आसीद एकमेवाद्वितीयम्। तद्धैक आहुरसदेवेदमग्र आसीद् एकमैवाद्वितीयम। तस्माद्सतः सज्जायत ॥ ६।२।१ ॥

कुतस्तु खलु सोम्यैवंस्यादिति होवाच। कथमसतः सज्ज्यायेतेति। सत्त्वेव सोम्येदमग्र आसीदेकमेवाद्वितीयम् ॥ २ ॥

तदैक्षत, बहुस्यां प्रजायेयेति। तत्तेजोऽसृजत। नत्तेज ऐक्षत। बहु स्यां प्रजायेयेति। तदपोऽसृजत। तस्मादयत्र क्वच शोचति स्वेदते वा पुरुषस्तेजस एव तदध्यापो जायन्ते ॥ ३ ॥

ता आप ऐक्षन्त, बह्वचः स्याम प्रजायेमहीति। ता अन्नमसृजन्त। तस्मादयत्र क्वच वर्षीति तदेव भूयिष्ठमन्नं भवति। अदभ्य एव तदध्यन्नाद्यं जायते ॥ ४ ॥

(हे सुन्दर बालक, पहले यह जगत् सत् के रूप में वर्तमान था। वह सत एक था, उसकों छोड़कर और कुछ नहीं था। उस विषय में कुछ लोग कहते हैं

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

पहले असत था एक मात्र और दूसरा कुछ नहीं था (परन्तु) वत्स, ऐसा कैसे हो सकता है ? (पिता ने कहा ।) असत् से सत् कैसे उत्पन्न हो सकता है ? वत्स पहले यह सत् स्वरूप था एक ही, बिना द्वितीम तत्त्व के । उस सत् ने सोचा 'मैं बहु बनूं, अपने को फैला लूं' । तब उसने जल की सृष्टि की । इस लिये जहाँ कहीं कोई मनुष्य शोक में पड़ता है अथवा अपने अन्दर ताप का अनुभव करता है उसकी आँखों से जल टपकता है और शरीर से पसीने का पानी निकलता है । उस जल ने सोचा—''मैं बहु बनूं, अपने को फैला लूं'' । तब उसने अन्न की सृष्टि की । उस कारण जहाँ कहीं पानी बरशता है बहुत अधिक अन्न उत्पन्न होता है । जल से ही अन्न की मृष्टि होती है ।

आगे चलकर आरुणि दिखाता है, सारा संसार इन तीन तत्वों के मिलने से बनता है । ये तीन तत्त्व सत् के ही रूप हैं । अतः सारा विश्व सत् का ही विकास है । वह सत् वास्तव में सत्य है । अतः और सब मिथ्या है । ''वह सत् ही आत्मा है । श्वेतकेतु, तुम वह सत् होः तत्त्वमसिः ।'

तैत्तिरीय उपनिषद् में कहा गया—

''यतो वा इमानि भूतानि जायन्ते येन जायानि जीवन्ति यत् प्रयन्त्यभिसंविशन्ति तद्विजिज्ञास स्व तब्द्रह्म (३।१)

(जहाँ से सब प्राणी उत्पन्न होते हैं उत्पन्न होकर जहाँ जीते हैं, जिसमें विलीन हो जाते हैं, उस तत्त्व को जानने की इच्छा करो । वह ब्रह्म है ।)

इसी उपनिपद् में कहा गया—

'तस्माद्वा एतस्मादात्मन आकाशः सम्भूत आकाशाब्दायुर्वायोरग्नि रग्नेरापोऽद्भ्वः, पृथिव्या ओषधय ओषधीभ्योऽन्नम् अन्नात् पुरुषः (२।१)'

उस आत्मा से आकाश उत्पन्न हुआ, आकाश से वायु, वायु से अग्नि, अग्नि से जल, जल से पृथिवी, पृथिवी से पेढ़ पौधे (पेड़ पौधो से अन्न और अन्न से जीव) ।

आकाश, वायु, अग्नि, जल और पृथिवी ये पाँच महाभूत हैं जिनके मिश्रण ने जगत् की सृष्टि हुई । आकाश का विशेप गुण है शब्द, वायु का स्पर्श, अग्नि का रूप, जल का रस और पृथिवी की गन्ध ।

मनु स्मृति के प्रथम अध्याय में भी सृष्टि की प्रक्रिया बतायी गई । मनु के वर्णन में नासदीय सूक्त, छान्दोग्य उपनिषद् तथा तैत्तिरीय उपनिषद् के वर्णनों का मिश्रण देखने में आता हैं ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

आत्मा ब्रह्म ही है, यह "तत्त्वमसि", "अयमात्मा ब्रह्म" इत्यादि उपनिषद् वाक्यों से स्पष्ट है। उपनिषदों को वेदान्त कहते हैं। उनके ऊपर जो दर्शन आधारित है उनको वेदान्त दर्शन कहते हैं। उनके सारतत्व एक श्लोक में कहा गया है :

श्लोकार्धेन प्रवक्ष्यामि यदुक्तं ग्रन्थ कोटिभिः।
ब्रह्म सत्यं जगन्मिथ्या, जीवो ब्रह्मैव नापरः॥

(आधे श्वलोक में मैं वह बात कहूँगा जो असंख्य ग्रन्थों में कही गई है। वह है ब्रह्म सत्य, जगत् मिथ्या और जीव ब्रह्म ही है उससे भिन्न नहीं।)

जगत्, जीव और ईश्वर, ये तीन तत्व, सब दर्शनों के प्राच्य अथवा पाश्चात्य विचार के विषय हैं। वेदान्त के अनुसार इनमें एक ही तत्व सत्य है, ब्रह्म।

ब्रह्म निर्गुण, निर्विशेष। इसी अर्थ को समझाने के लिये बृहदारण्यक उपनिषद कहता है—

"स एष नेति नेति आत्मा (३।९।२६)।"

(इस आत्मा में कुछ नहीं है) यह एक अत्यन्त प्रसिद्ध उक्ति है। संसार की वस्तुओं में जितने गुण है उनमें से एक भी ब्रह्म में नहीं है।

कठोपनिषद ने ब्रह्म अर्थात् आत्मा के वास्तव स्वरूप को समझाने के लिये कहा—

"न तत्र सूर्या भाति न चन्द्र तारकं
नेमा विद्युतो भान्ति कुतोऽयमग्निः।
तमेव भान्तमनु भान्ति सर्वं
तस्य भासा सर्वमिदं विभाति॥ ५।१५॥"।

(वहाँ सूर्य चमकता नहीं, न चन्द्रमा, न तारायें चमकती हैं। यह बिजलियाँ वहाँ चमकती नहीं। यह अग्नि (भी) कैसे चमक सकती हैं? उसके प्रकाश के पीछे सब कुछ प्रकाश पाता है। यह सारा जगत् आत्मा (ब्रह्म) के प्रकाश से प्रकाशित होता है।)

ब्रह्म के स्वरूपका परिचय नहीं दिया जा सकता। इस लिये कहा गया है—

"उच्छिष्टं सकलं शास्त्रं नोच्छिष्टं ब्रह्म केवलम्"

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

(सारे शास्त्र मुख के द्वारा उच्चारित होने के कारण जूठे हो गये—केवल ब्रह्म जूठा नहीं हो पाया ।)

अब यहाँ एक प्रश्न उठता है ब्रह्म जब निर्गुण, निर्विशेष है, ब्रह्म से जगत की सृष्टि हुई इन वाक्यों का क्या अर्थ है ? इसके उत्तर में आचार्य शंकर ने कहा है—

"न चेयं परमार्थविषया सृष्टिश्रुतिः, अविद्याकल्पित नामरूपम-व्यवहारगोचरत्वात्, ब्रह्मात्म भाव प्रतिपादनपरत्वाच्च इत्येतदपि न विस्मर्तव्यम—(ब्रह्म सूत्रभाष्य २।१।३३) ।"

(वेद में ब्रह्म ने जगत की सृष्टि की यह वचन पारमार्थिक सत्य नहीं है कारण अज्ञान से जो नाम और रूप की कल्पना के ऊपर आश्रित लोकव्यवहार है उसपर यह आधारित है । (यह व्यवहारिक सत्य है, पारमार्थिक नहीं) । तथाकथित सृष्टि वाचक वेद की उक्तियाँ केवल इस उद्देश्य से कही गई है कि ब्रह्म और आत्मा एक ही है यह तत्व समझ में आ जाय । यह बात भूलनी नहीं चाहिये ।)

(श्री शंकराचार्य के अनुसार सत्य तीन प्रकार के हैं—पारमार्थिक, व्यावहारिक तथा प्रातिभासिक । पारमार्थिक अर्थात् वास्तव सत्य केवल ब्रह्म का है । व्यावहारिक अर्थात् काम चलाऊ सत्य जगत का, सांसारिक जीवों का है । प्रातिभासिक अर्थात् तात्कालिक भान का सत्य । अन्धकार में रज्जु देखकर वह सर्प है, अथवा सीप को देखकर वह चाँदी है, इस प्रकार के भ्रम के भ्रम-ज्ञान का सत्य है । इस भ्रमज्ञान को भी इसलिये सत्य माना गया कि जब तक प्रकाश आनेपर रज्जु का बोध नहीं होता है तब तक सर्प दर्शन से उत्पन्न भय की तरह भय होता है । इसी प्रकार ध्यान से जब तक देखा नहीं जाता तब तक सीप के विषय में चाँदी देखने से उत्पन्न लोभ वर्तमान् रहता है । रज्जु के बोध होते ही सर्प की बुद्धि हट जाती है, सर्प रज्जु में विलीन हो जाता है । इसी प्रकार सीप के ज्ञान होते ही चाँदी उसी में मिल जाती है । इसी प्रकार जब तक ब्रह्म ज्ञान नहीं होता तब तक जगत है, नाना प्रकार के जीव है और इनमें नाना प्रकार के गुण और सम्बन्ध है । ब्रह्मज्ञान होते ही इस सबका ब्रह्म तत्व में विलय हो जाता है ।

व्यावहारिक दृष्टि से जब जगत सत्य है, इसकी सृष्टि ईश्वरकृत है यह मानने में कोई दोष नहीं है । ब्रह्म भले ही निर्गुण हो, व्यावहारिक दृष्टि से

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

ईश्वर रूप में वे चेतन पुरुष है। चेतन ईश्वर ने जगत् की सृष्टि की यह मत सांख्य दर्शन को रुचता नहीं। इस दर्शन के अनुसार सत्व (प्रकाश) रजः (कार्य) और तमः (अन्धकार) ये तीन गुणों से युक्त अचेतन प्रकृति ही जगत् का कारण है। जैसे चुम्बक जड़ होते हुए भी लोहे को खींचता है इसी प्रकार जड़ प्रकृति पुरुषों को भोग देने के लिये अपने को जगत् के रूप में बदल लेती है। बादरायण ने अपने ब्रह्म सूत्रों में सांख्य मत का खण्डन किया है और ईश्वर कारण वाद (ईश्वर ही जगत् का कारण है इस मत) का प्रतिपादन किया और इस पर उठाई गई आपत्तियों का समाधान किया है। इन आपत्तियों में एक यह है कि गुणों के अतीत ईश्वर को जगत् सृष्टि का प्रयोजन हो सकता है ? इसके उत्तर में बादरायण ने कहा—

"लोकवतु लीलकैवल्यम् (२।१।३३)"

(यह केवल उनकी लीला है—जैसे संसार में बिना प्रयोजन के केवल खेल के लिये लोग नाना प्रकार के कार्य करते हैं।)

व्यावहारिक दृष्टि से सत्य जगत् में जीव नाना प्रकार का कार्य करता है। वह जैसा कार्य करता है वैसा फल भोगता है। बृहदारण्यक उपनिषद जीव के विषय में कहता है—

"यथाकारी यथाचारी तथा भवति। साधुकारी साधुर्भवति, पापकारी पापो भवति। पुण्यः पुण्येन कर्मणा, पापः पापेन (४।४।५)

(जो जैसा करता है, जैसा आचरण करता है वह वैसा होता है। अच्छा कार्य करनेवाला अच्छा होता है, बुरा कार्य करनेवाला बुरा होता है। पुण्य कर्म से पवित्र होता है, पाप कर्म से पापी।)

यह कर्मवाद हमारे धर्माचरण का मूल मन्त्र है, हिन्दू, जैन और बौद्ध मतों की आधारशिला है। कर्म के कारण ही आवागमन होता है। जबतक कर्म का क्षय नहीं होता है, तब तक आवागमन से छुटकारा नहीं मिलता है। बुरे कर्म करने से बुरी गति होती है, अच्छे कर्म करने पर अच्छी गति होती है। अच्छे कर्मों के करने वाला स्वर्ग में भी जा सकता है। स्वर्ग भी नित्य नहीं है। छान्दोग्य उपनिषद् ने कहा है—

"तद्यथेह कर्मजितो लोकः क्षीयते एवमेवामुत्र पुण्यजितो लोकः क्षीयते (८।१।६)"।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

इस जगत में कर्म से उपार्जित दशा का जैसा क्षय होता है, इसी प्रकार परलोक में भी पुण्य के द्वारा उपार्जित दशा का क्षय होता है।

पुण्य के क्षय होने पर मनुष्य पुन' मर्त्यलोक में प्रवेश करते हैं ("क्षीणे पुण्ये मर्त्यलोकं विशन्ति")। छान्दोग्य उपनिषद् की भाषा में "जायस्व म्रियस्व (५।१०।८)" (जन्म लेओ मरो) का ताता बना रहता है। इस आवागमन से मुक्ति के लिये सब शास्त्र उपदेश देते हैं। वेदान्त में बताया गया है जीव और ब्रह्म एक ही हैं, इस ज्ञान से ही मुक्ति मिल सकती है। शंकराचार्य के आत्मबोध में कहा गया—

"बोधोऽन्यसाधनोभ्यो हि साक्षान्मोक्षैकसाधनम् ।
पाकस्य वह्निवज् ज्ञानं बिना मोक्षो न सिध्यति ।। २ ।।

मुक्ति के लिये जितने उपाय बताये गये उनमें ज्ञान ही साक्षात् और एकमात्र उपाय है। जैसे अग्नि के बिना भोजन नहीं पकाया जा सकता, इसी प्रकार ज्ञान के बिना मोक्ष नहीं साधा जा सकता।

जीवात्मा और परमात्मा जब एक ही वस्तु हैं, जीव-जीव में भेद की भावना, जातीयता, प्रान्तीयता अनुचित है। इस भेद बुद्धि से संसार में बड़ा भारी अनर्थ हुआ और हो रहा है। परन्तु अन्य मनुष्यों पर अत्याचार बढ़ता ही जा रहा है। सब धर्मों में उदारता के उपदेश होते हुए भी विभिन्न धर्माव-लम्बियों में धर्म के नाम से संघर्ष और जननाश देखने में आते हैं।

इन दुराचरणों के मूल में है लोभ। ईशोपनिषद् का प्रथम मन्त्र है–

"ईशावास्यमिदं सर्वं यत् किंच जगत्यां जगत् ।
तेन त्यक्तेन भुंजीथा मा गृधः कस्य स्विद् धनम् ।।"

(जगत में जितने प्राणी है, उन सब के अन्दर ईश्वर निवास करते हैं। उन्होंने जो कुछ दिया है, उसी का उपभोग करो, अन्य के धन पर लोभ न करना।

परन्तु लोभ मिटता नहीं। जितना लाभ होता है, उतना लोभ भी बढ़ता है। विष्णु पुराण ने कहा है—

"न जातु कामः कामानामुपभोगेन शाम्यति ।
हविषा कृष्णावर्त्मेव भूय एवाभिवर्धते ।।१०।२३।।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

(काम के उपभोग से कामों की शान्ति नहीं होती है, घी से आग की तरह वह वढ़ ही जाता है)।

स्वामी विवेकानन्द ने "सखार प्रति" इस शीर्षक की बंगला कविता में कहा है—"स्वार्थ, स्वार्थ, सदा एई रव, हेथा कोथा शान्तिर आकार ?" (स्वार्थ, स्वार्थ, ऐसा लोग बराबर चिल्लाते हैं, यहाँ शान्ति का दर्शन कहाँ से हो सकता है ?)

स्वार्थपरता न केवल व्यक्ति के जीवन में देखने में आती, यह जातीय जीवन में भी पाई जाती है। इसी से अन्य जातियों के ऊपर अपना अधिकार जमाने के लिए निरन्तर प्रयास देखने में आता है। इसी से साम्राज्यवाद, उपनिवेशवाद और इस युग का प्रभाववाद (स्फीयर ऑफ इन्फ्लुएन्स) चारों ओर फैले हुए हैं। इन वादों के लिए युद्ध एक अनिवार्य साधन है। योरोप के इतिहास में "हन्ड्रेड इयर्स वार" (सौ साल का युद्ध) प्रसिद्ध है। इन युद्धों में असंख्य जनों की प्राण हानि हुई है और हो रही है। पहले सेनाओं के बीच युद्ध होता था और साधारण जनता अपने कार्य शक्ति के साथ करती थी अब तो युद्ध ने "टोटल वार" (सम्पूर्ण युद्ध) का रूप ले रखा है। 'स्कर्चढ आर्थ' (जलायी हुई भूमि) सर्वत्र देखने में आती है। इस युग के अस्त्र-शस्त्रों की संहार शक्ति भी अत्यन्त भयानक है। विज्ञान के अपव्यवहार से जिन परमाणु विस्फोटकों का प्रचार हो गया है उनको त्यागने का कोई भी प्रयत्न नहीं हो रहा है।

ऐसी परिस्थिति में विश्व का भविष्य बहुत ही अन्धकार से छा गया है। हमारे पूर्वजों की भविष्यवाणी की थी कि कलियुग की दशा भयंकर होगी। उस दशा को सुधारने के लिए कल्कि अवतार का आश्वासन भी दिया था। परन्तु कल्कि महाराज कब आने की कृपा करेंगे ? ऐसा लग रहा है कि उनके आने के पूर्व विश्व की जातियाँ सुन्दोपसुन्द न्याय से परस्पर कट कर समाप्त हो जायेगी और महाप्रलय आ जायगा।

इस दुर्दिन में भी आशा की क्षीण रेखा देखने में आ रही है। भारतवर्ष अवतारी महापुरुषों का देश है। अब भी महापुरुषों का जन्म हो रहा है और उनकी वाणियों का प्रचार हो रहा है। उनके उपदेश व्यर्थ नहीं होंगे। विश्व का ध्वंस नहीं होगा। कलिंग युद्ध की प्रतिक्रिया में महाराज अशोक को चेतना आई थी। वे चण्डाशोक से धर्माशोक में बदल गये। आत्मघाती युद्धों

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

से कुछ लाभ नहीं है, यह बात विश्व के नेताओं की समझ में आयेगी और समूल नाश के पूर्व वे अपने दुष्कृत्यों को छोड़ेंगे। उसमें भारत की शाश्वत वाणी —"वसुधैव कुटुम्वकम्" (सारी पृथ्वी एक परिवार है) का विशेष प्रभाव पड़ेगा। हम यदि ब्रह्म स्वरूप हैं, तो भेद की भावना क्यों रहे? वेदान्त का व्यावहारिक प्रयोग तो विश्व प्रेम में है। स्वामी विवेकानन्द ने पूर्वोक्त कविता के अन्त में कहा था—"जीवे प्रेम करे येइजन सेइ जन सेविछे ईश्वर" (जो जीव पर प्रेम की भावना रखना है वही ईश्वर की सेवा करता है)। ईश्वर की ऐसी सेवा संसार में आयेगी। कवि रवीन्द्र नाथ टैगोर के शब्दों में मैं इस निवन्ध को समाप्त करता हूँ—

"ए नहीं काहिनी, ए नहे स्वपन
आसिबे से दिन, आसिबे।"

यह कहना नहीं है, यह स्वप्न नहीं है, वह दिन आवेगा, वह दिन आवेगा।

करारविन्देन पदारविन्दं मुखारविन्दे विनिवेशयन्तम्।
अनन्त रूपेण जगत्प्रविष्टं कूटस्थ नित्यं हरिमेकमीडे॥

●

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

सत्य

डा० जड़ावलाल मेहता

जो यह मानकर सत्य की शोध करते हैं कि मानो वह दिखाई पड़ते से बहुपरती आवरण के अन्दर छुपी और प्रावरित पड़ी एक वस्तु हो, वे अन्ततः इब्सन के पीयर गायन्त की भाँति निर्भ्रान्त होते हैं। उसने जीवन के प्याज की एक-एक परत छीलकर न्यष्टि ढूंढने की चेष्टा की थी और जाना था कि अन्तर-तम खण्ड और कुछ नहीं केवल एक परत है। यह कि वस्तु के मूल में कोई स्व, तत्व या सार नहीं, वही अन्तःदृष्टि है जिसपर बौद्ध चिन्तन का समूचा ताना बाना बुना गया है। एक वस्तु परक सत्य होता है, किन्हीं वस्तुओं का भी एक सत्य होता है और कोई चाहे तो वस्तुओं में कुछ सत्य की चर्चा कर सकता है। किन्तु अन्य वस्तुओं के बीच सत्य स्वतः कोई वस्तु नहीं है। अतएव वह कोई स्पर्शवेद्य या परिस्पृश्य वस्तु नहीं है, निश्चय ही कोई ऐसी वस्तु नहीं है जिसे हम दृढ़ता से अपने सुरक्षित स्वत्वाधिकार में रख सकें। यह शब्द **सत्य** उन लोगों के शब्दकोश में नहीं मिलेगा जिनके लिए जो कुछ भी अर्थपूर्ण है **वस्तु** है।

हैंगेल ने कहा था "सत्य" पूर्ण है। इसी विचार ने जीवन के प्रयोग में और समूचीं कल्पनाशील क्रियाशीलता में हमारे देश के टैगोर की भाँति गेटे को भी प्रेरित किया था। दर्शन में हेगेल के चिरस्मरणीय प्रयास के पीछे यही प्रेरणा थी जो आगे चलकर ब्रिटिश आदर्शवादी ब्रैडले और बोसानक्वेट द्वारा प्रतिध्वनित हुई। किन्तु हमें अपने आपसे एक प्रश्न पूछना चाहिए, एक प्रश्न जो इन प्रख्यात और सृजनशील महानुभावों ने कभी नहीं पूछा। "पूर्ण" की कल्पना चाहे उसके अंशों के योग के रूप में की जाय या उससे "कुछ अधिक" के रूप में, किन्तु तब भी क्या यह "पूर्ण'. स्वयमेव एक वस्तु-पुंज नहीं है ? स्पिनोजा ने इस समष्टि को, "जो कुछ भी है" उसके साकल्य को "प्रकृति" नाम दिया था और उसमें ईश्वर से इसकी संवादिता स्थापित की जिससे मसीही आस्था उस पूर्ण के एक सत्य में मृषालाप बन गयी जो इस पूर्ण से परे है और जो स्वयं इस पूर्ण को उसका अस्तित्व और महत्व प्रदान करता है। इस पूर्ण के आविर्भाव और अर्थ का हमें बोध करा सके, ऐसी किसी शक्ति या प्रकाश का संधान वह व्यग्रता है जो मानव के धार्मिक जीवन

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

और भारतीय या पाश्चात्य आध्यात्मिक विचारकों के बौद्धिक श्रम का संचालन करती है।

इस अनुसंधान के उद्देश्य के परम्परागत नाम है, ईश्वर-धर्म की भाषा में अनुभवातीतता-आध्यात्म की धर्मनिरपेक्ष भाषा में और ब्रह्मन-उपनिषद् के ऋषियों की वाणी में। उसका अपेक्षाकृत सटीक नाम है "सत्य" जैसा गांधी ने आग्रह किया है और जैसा श्रीमद्भागवत का प्रथम श्लोक अभिव्यक्त करता है। (सत्य परम् धीमही)।

इसमें भी अधिक महत्वपूर्ण थी हेगेल की अन्तदृष्टि जिसके अनुसार, सार्त्र के शब्दों में, सत्य एक ऐसी वस्तु है, जो होती है, जो हो गयी है और जो हो गयी होगी। यह घटना है जो साकार होती है केवल मनुष्यों के प्रयोजनों और कृतियों में, व्यक्ति के जीवन में उसके अपने निजी ऐडवेंचर में वर्तमान रहती है, न कि अमूर्त दूरस्थ आदर्श में जिसे दूर से अभिस्वीकृत किया जाय और पूजा जाय। कीर्कगार्द का कथन है कि सत्य आत्मपरकता है, जीवी अनुभव है और व्यक्तिगत निष्पति का एक गुण है, कीटस् के शब्दों में जबतक जीवन में स्पन्दित न हो कुछ नहीं है। संकुलता असत्य है और ऐसे ही सभी प्रकार की वस्तुपरकता भी। सत्य केवल सैद्धांतिक इष्ट नहीं है, बल्कि जैसा आगे बढ़कर मार्क्स कहता है, इतिहास का उपादान है, जगतमय-होता दर्शन जिसकी ठोस चर्या (प्रैक्सिस) एवं आदमी के अपने सहबन्धु से परस्पर सम्बन्ध में संप्राप्ति होती है।

युगों से दार्शनिकों ने सत्य की परिभाषा और प्रकृति पर विचार विमर्श और विवाद किया है। कुछ ने कहा है कि जो भी है, सत्य है, पाश्चात्य परम्परा के अन्य लोगों ने माना है कि यह तथ्य और उक्ति की संवादिता में मिलता है। अपेक्षाकृत आधुनिक समय में और संसार के बारे में वैज्ञानिक ज्ञान के स्वरूप को दृष्टिगत रखते हुए सत्य की परिकल्पना समस्त अनुभूत ज्ञान को आवेष्ठित करती, प्रस्थापनाओं की प्रणाली के रूप में की गयी है। ये समस्त दार्शनिक सिद्धान्त मूलतः अपने अनुभवों और केवल अनुकलन और संगणना कर सकने वाली एक विचार विधि से प्रत्येक वस्तु को विषयाश्रित बनाने तथा प्रत्ययात्मकता की क्रिया द्वारा उसमें उद्घाटित जगत पर प्रभुत्व स्थापित करने के मानवी प्रयास की अभिव्यजनाएं हैं।

आद्य रूप में सत्य पदार्थ रूप में जो सामने आता है इस प्रकार ज्ञातव्य है और प्रस्थापना में जो सूत्रबद्ध है उससे कुछ और अधिक है। वह प्रकाश

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

है, खुलेपन का क्षेत्र है जिसमें सभी सम्मुखीकरण, सभी जानकारियाँ और सूत्रीकरण घटित होते हैं और संभव बनाये जाते हैं। यह कोई ऐसी वस्तु नहीं है जिसे हम अपने कब्जे में रख सकें बल्कि एक ऐसी वस्तु है जो हमें अपने स्वामित्व, आदेश और वितरण में (डिस्पेंसेशन) बांध कर रखती है। इस कारण सत्य कभीं उस प्रकार ज्ञात नहीं हो सकता जैसे रेखागणित का सत्य जाना जा सकता है, संगोपन और उद्घाटन दोनों उसमें अन्तर्निहित हैं और हम उसे केवल संप्राप्त कर सकते हैं, उसकी सेवा कर सकते हैं और यदि चाहें तो उसके चारण (शेफर्ड) हो सकते हैं।

पूर्व और पश्चिम दोनों ही में पुरातन काल से जैसी झलक मिलती है, सत्य का भाषा से निकटतम और अन्तरंग सम्बन्ध रहा है। हर परम्परा को उसके ऐतिहासिक पथ पर स्थापित करनेवाले, उद्भव के समय श्रुत आदि शब्द में सत्त एक नाद है जो जनसमूह विशेष को उसकी दुनिया, उसका जीवन और नियति प्रदान करता है। सभी कथित या कृत, अनुभवित या सह्य सच या झूठ उसी सत्य द्वारा प्रमाणित एवं समर्थित हैं। तथापि, चूंकि सत्य इस अन्तिमेत्थ आदिम असंगोपन के भाव में स्वतः संगोपनीयता में आरोपित है, इसलिए वह हमेशा रहस्य बना रहता है, हमें अपने आन्दोलन में आबद्ध रखता है, कभी हमारा उपहास करता है और कभी चुनौती देता है, साथ ही प्रेम और स्वस्त्ययन में हमें आमंत्रित भीकरता है कि उसके दावे का प्रत्युत्तर दें और इस प्रकार अपने प्रत्युत्तर रूप शब्द तथा कर्म द्वारा अपने नश्वर अस्तित्व को परिपूर्ण बनायें। ये हैं वे शब्द और कर्म जो हमें मनुष्य बनाते हैं, हमारे जीवन को पूजा की प्रतिष्ठा तथा हमारे अस्तित्व को मानवता की साहस यात्रा में समभागी होने का आनन्द प्रदान करते हैं।

●

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

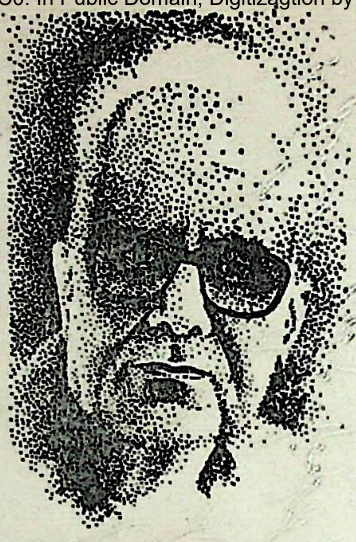

डा० भानु शंकर मेहता

जन्म : 25 मई 1921।

- सन् 1948 से वाराणसी में पैथोलाजिस्ट के रूप में कार्यरत।

लेखन : सन् 1940 से लेखन कार्य आरंभ।

"कविता" का प्रथम प्रयास 1940 में—श्री गिरजा कुमार माथुर द्वारा निर्देश;

सन् 1965 में वर्तमान रचनाएं स्व० श्री कृष्ण देव प्रसाद गौड़ "बेढब बनारसी" के निर्देश पर—

अन्य लेखन=लोक स्वास्थ्य विज्ञान शिक्षा, कहानी ललित निबन्ध, यात्रा साहित्य, बाल साहित्य, नाट्य साहित्य, बनारस, रामलीला, प्रदूषण, हास्य व्यंग, अनुवाद (अंग्रेजी, गुजराती, मराठी से)।

प्रकाशित कृतियां : (१) भारतेन्दु नाट्य रूपक, (२) वे सपनों के देश से लौट आये है (नाटक), (३) अच्छा मुन्ना गंदा मुन्ना, (४) चिकित्सा की प्रगति, (५) बाला जोगन, (६) बोलने की कला।

अनुवाद : (१) कहीं दूर जब दिन ढले, (२) सरदार माने सरदार, (३) करुणामूर्ति बुद्ध, (४) महामानव महावीर, (५) कृष्ण और मानव संबंध (प्रकाशनाधीन)।

अप्रकाशित काव्य संग्रह : (१) डायलॉग, (२) खिलौनो की दुकान, (३) हंसगीत, (४) लवंगी (५) गुर्जरी (गुजराती कविताओं का अनुवाद)।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi